न्दूलाल कृत

बारामासे

डॉ० नरेश

भारतीय ग्रन्थ निकेतन
१३३, लाजपतराय मार्केट,
दिल्ली-११०००६

बारामासे

चन्दूलाल कृतं

बारामासे

डॉ० नरेश

भारतीय ग्रन्थ निकेतन
१३३, लाजपतराय मार्केट,
दिल्ली-११०००६

प्रकाशक : भारतीय ग्रन्थ निकेतन,
१३३, लाजपतराय मार्केट,
दिल्ली-११०००६
आवरण शिल्पी : पाल बन्धु
प्रथम संस्करण : १९७५
मूल्य : १०.००
मुद्रक : नटराज आर्ट प्रेस,
लाजपतराय मार्केट,
दिल्ली-११०००६

BARAMASE
By Dr. Naresh

आमुख

प्रस्तुत संग्रह पाठकों तक पहुँचाते हुए, मुझे बहुत हर्ष हो रहा है। पिछले कई वर्षों के निरन्तर प्रयास एवं श्रम से मैं पण्डित चन्दूलाल की रचनाएँ जुटा पाया हूँ। प्रस्तुत पुस्तक उन हस्तलिखित ग्रन्थों में से एक है, जो अवधि की चादर ओढ़ कर अपने अस्तित्व से निराश हो रहे थे। मालूम नहीं, ऐसे कितने कवि तथा उनकी रचनाएँ इतिहासकारों की कृपादृष्टि से वंचित पड़ी हैं।

आज से एक शताब्दी पूर्व, पंजाब की एक छोटी सी रियासत, मालेरकोटला में एक ऐसे कवि का जन्म हुआ था, जिसे तत्कालीन समाज ने मान्यता तो दी, परन्तु वह साहित्य में कोई स्थान न बना सका। सन् १९६२ में प्रकाशित मैंने अपने एक लेख (सप्त सिंधु : नवम्बर, १९६२) में लिखा था कि उर्दू-फ़ारसी का दौर हो और फिर मालेरकोटला सा मुसलमानी नगर, भला वहाँ हिन्दी बेचारी को कौन पूछता? निस्संदेह संदेश रासक के रचयिता अब्दुर्रहमान से लेकर आधुनिक युग तक मुसलमान कवियों तथा लेखकों का हिन्दी के साथ घनिष्ठ संबंध बना हुआ है, परन्तु हिन्दी को हमारे मुसलमान भाइयों ने जन-भाषा के रूप में स्वीकार नहीं किया था। सम्भवतः यही कारण है कि मालेरकोटला का कोई हिन्दी कवि राज्यकवि न बन सका।

अहिन्दी वातावरण में जन्म लेकर, अहिन्दी भाषा-भाषी लोगों में पल-बढ़ कर अहिन्दी जगत् में रह कर, इतनी सुन्दर खड़ी बोली हिन्दी लिखना, सचमुच ही चन्दूलाल का श्रेय है।

इस पुस्तक में संकलित बारामासे भिन्न-भिन्न पाण्डुलिपियों से चुन कर एकत्रित किए गए हैं। पुस्तक के आरम्भिक पृष्ठों में इन रचनाओं की परि-चयात्मक समीक्षा भी दे दी गई है। आशा करता हूँ कि पण्डित चन्दूलाल के बारामासों का यह संग्रह रुचिकर लगेगा।

अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, **नरेश**
पंजाब विश्वविद्यालय,
ईवनिंग कॉलेज, चण्डीगढ़

विषय-सूची

अपने भाई सर्वेश जी के नाम

डॉ० राम स्वरूप आर्य, बिजनौर
की स्मृति में सादर भेंट—
हरप्यारी देवी, चन्द्रप्रकाश आर्य
संतोष कुमारी, रवि प्रकाश आर्य

आलोचनात्मक अध्ययन

बारामासा लोकगीत का ही एक रूप है। वियोगिनी नायिका पर वर्ष का एक-एक महीना, महीने का एक-एक दिन तथा दिन का एक-एक पल भारी होता है। प्राप्त बारामासों में वियोगग्रस्त नायिका की मनोदशा का इतना विस्तृत वर्णन तो नहीं मिलता परन्तु प्रत्येक महीने में ऋतु परिवर्तन के साथ-साथ, उसके मन में आन्दोलित हो रहे मनोभावों का चित्रण अवश्य किया गया है। हिन्दी सहित्य कोश के अनुसार "बारहमासा लोकगीतों का वह प्रकार है, जिसमें किसी विरहिणी स्त्री के प्रत्येक मास के अनुभूत दुःखों तथा हार्दिक मनोवेदनाओं की विवृति पाई जाती है। चूँकि इन गीतों में साल के बारह मासों के दुःखों का वर्णन होता है, अतः इनको बारहमासों की संज्ञा प्राप्त हुई है[1]।" यद्यपि बारामासा गीतों में, विभिन्न महीनों में विरहिणी के शरीर पर बीतने वाली असह्य वेंदनाओं का चित्रण मिलता है तथा ये गीत उन सभी धरती की पुत्रियों के हैं, जो बहू बनकर इन्हें गाती हैं और हृदय की दाह बुझाती हैं,[2] फिर भी अनेक कवियों ने इन्हें प्रकृति चित्रण का साधन भी बनाया है। गुरु गोविन्द सिंह ने विप्रलम्भ भावना की तीव्रता प्रदर्शित करने के लिए, प्रकृति के विविध उपकरणों से अपने बारामासों को सुसज्जित किया है। उनके राधा और गोपियों की विप्रलम्भ अवस्था से सम्बन्धित बारहमासा के वर्णनों में प्राकृत दृश्यों के विविध रूपों का संयोजन मिलता है। 'कृष्णावतार' में गोपियों और राधा की विरह भावना बारहमासा के रूप में अलग-अलग चित्रित है। दोनों में ही प्रत्येक मास की निजी विशेषता का सजीव वर्णन किया गया है।[3]

१. हिन्दी साहित्य कोश : भाग १ : पृ० ५५६।
२. मोहनलाल बाबुलकर : गढ़वाली लोक साहित्य का विवेचनात्मक अध्ययन : पृ० ५६।
३. डॉ० प्रसिन्नी सहगल : गुरु गोविन्द सिंह और उनका काव्य : पृ० २२७।

परम्परा :

भारतीय साहित्य में बारामासों की परम्परा काफी पुरानी है। संस्कृत में बारामासों का जो रूप उपलब्ध होता है, वह षड्ऋतु वर्णन है। संस्कृत कवियों के निकट यह वर्णन महाकाव्य का एक आवश्यक अंग होता था। अपभ्रंश में प्राप्य तेरहवीं शताब्दी में रचित जिन धम सूरी के 'बारह नावऊ' तथा विजय चन्द सूरी के 'नेमिनाथ चतुष्पादिका' में इस काव्य-विधा के दर्शन होते हैं। श्री अगर चन्द नाहटा चौथी शताब्दी में रचित 'अंग विज्जा' नामक ग्रन्थ में निहित बारहमासा को सबसे प्राचीन बारहमासा स्वीकार करते हैं।[१] डॉ० नामवर सिंह के अनुसार सन् १२०० में विनय चन्द्र सूरि विरचित 'नेमिनाथ चउपई' में उपलब्ध बारहमासा ही अपभ्रंश साहित्य में उपलब्ध प्रथम बारहमासा है।[२] हिन्दी में प्रथम बारहमासा मलिक मुहम्मद जायसी कृत पद्मावत (नागमती विरह वर्णन) में प्राप्त होता है। 'बहुत संभव है कि जायसी ने लोक में प्रचलित इन गीतों की मधुरता को देखकर ही इन्हें नागमती के विरह-वर्णन का माध्यम बनाया हो।'[३] इसके अतिरिक्त सेनापति के बारामासों में भी काव्य-सौंदर्य के दर्शन होते हैं।

मैथिली में पावस ऋतु में जो आनन्दोन्मत्त गीत गाये जाते हैं, वे बारहमासा, छौमासा तथा चौमासा के नाम से प्रसिद्ध हैं। बारहमासा में वर्ष भर का, छौमासा में छः महीनों का प्राकृतिक सौन्दर्य-वर्णन और चौमासा में आषाढ़ सावन, भादों और आश्विन महीने का प्रकृति चित्रण होता है। श्री राम इकबाल सिंह 'राकेश' ने मैथिली बारहमासों की भावभूमि को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि 'बारहमासा मैथिल लोक साहित्य की अनुभूत्यात्मक अभिव्यंजना है।''[४] अवधी में सावन, चौमासे तथा बारहमासे के गीत वर्षा ऋतु के प्रारम्भ होने के साथ गाँवों में शुरू हो जाते हैं।[५] बंगला में इन गीतों को 'बारामाशी' कहते हैं, जो बारहमासा का ही रूपान्तर है। बंगला बारामाशी में भी स्त्री की विरहजन्य वेदना का चित्रण हुआ है। बारामाशी की यह विशेषता है कि इसमें प्रत्येक मास में होने वाले व्रतों का भी विवेचन है।[६] गढ़वाल में 'बारामासो' और 'बारामासी' दोनों शब्दों का प्रयोग होता है। सामान्यतः उनका विषय

---

१. अगरचन्द नाहटा : प्राचीन काव्यों की रूप परम्परा : पृ० ३०।
२. डॉ० नामवर सिंह : हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग : पृ० २१९।
३. हिन्दी साहित्य कोश : भाग १ : पृ० ५५६।
४. राम इकबाल सिंह राकेश : मैथिली लोकगीत : पृ० ३६०।
५. इन्दु प्रकाश पाण्डेय : अवधी लोकगीत और परम्परा : पृ० २८५।
६. डॉ० कृष्णदेव उपाध्याय : लोक साहित्य की भूमिका : पृ० ७२।

विरह-निवेदन होता है किन्तु उनमें महीने-विशेष की सामान्य प्राकृतिक स्थिति तथा उसमें खेतों में किए जाने वाले श्रम जैसे फसल काटना, गोड़ना, बोना आदि का भी उल्लेख मिलता है।[1] राजस्थानी में 'माधवानल कन्दला' में बारह-मासा पद्धति का प्रयोग हुआ है। पंजाबी में इस काव्य-विधा का प्रयोग पर्याप्त मात्रा में हुआ है। गुरु नानक, गुरु अर्जुन देव, अली हैदर, हाशिम आदि कवियों ने बारामासों की रचना की है। उर्दू में १९२६ में रचित 'अफ़ज़ल' पानी-पती का बारहमासा उपलब्ध है। हरियाणवी भाषा में प्राप्य बारामासों में भी विरहजन्य वेदना का कथन ही रहता है। सावन के मनभावन काल में विप्रयु-क्ताओं का विरह जब उत्कर्ष को प्राप्त हो जाता है, तब उसका प्रवाह बारह-मासा के रूप में फूट पड़ता है।[2]

प्रस्तुत पुस्तक में संग्रहीत बारामासे उपरोक्त बारामासों से नितान्त भिन्न हैं। इन बारामासों को न प्रकृति चित्रण का साधन ही बनाया गया है और न विरह निवेदन का माध्यम। यहाँ बारामासा कालावधि का सूचक है। इन बारामासों में वर्णित कथाओं में विस्तृत देश काल के सूचक बनकर ये बारा-मासे पारम्परिक बारामासों से भिन्न तथा इस क्षेत्र में नूतनता के वाहक बनते हैं।

मास क्रम :

लोक साहित्य में बारामासे प्रायः आषाढ़ मास से आरम्भ होते हैं। कहीं कहीं ये वर्ष के प्रथम मास चैत्र से भी प्रारम्भ होते हैं।[3] परन्तु अनेक भारतीय भाषाओं में बारहमासों का आरम्भ ज्येष्ठ, कार्तिक या श्रावण से भी होता है। आदिग्रन्थ में उपलब्ध गुरु अर्जुन देव के बारामासे का आरम्भ चैत्र से होता है।

चन्दूलाल के बारहमासों में जो एक नई बात दिखाई देती है, वह है इनका 'तेरहमासा' होना। ये बारामासे वर्ष के बारह महीनों पर आधारित न होकर तेरह महीनों पर आधारित हैं। यह तेरहवाँ महीना है 'लौंद' का महीना। इसे 'मलमास' तथा 'पुरुषोत्तम मास' भी कहते हैं। देशी महीने क्योंकि अंग्रेज़ी महीनों की तरह दिनों की मात्रा को कमाधिक नहीं करते तथा फरवरी की तरह चौथे साल उन्तीस दिन की व्यवस्था नहीं करते; इसलिए प्रत्येक तीसरे

---

१. डॉ० गोविन्द चातक : गढ़वाली लोक साहित्य—एक सांस्कृतिक अध्ययन : पृ० १३७।
२. डॉ० शंकर लाल यादव : हरियाना प्रदेश का लोक साहित्य : पृ० २२६।
३. हिन्दी साहित्य कोश : प्रथम खण्ड : पृ० ५५६।

वर्ष, दो संक्रान्तों के मध्य में पड़ने वाले महीने की व्यवस्था की गई है। इसे ही 'चन्द्रमास' या 'लौंद' का महीना कहा जाता है। इस महीने को चन्दूलाल ने बारह महीनों के अन्त में स्थान दिया है।

प्रस्तुत संग्रह में 'बारामासा श्री रामचन्द्र' में बारहमासों के अतिरिक्त एक पद समाप्ति का भी सम्मिलित है। इसी प्रकार 'बारामासा नेमिनाथ', 'बारामासा प्रह्लाद' तथा 'बारामासा हरिश्चन्द्र' में बारहमासों के अतिरिक्त समाप्ति का एक एक पद सम्मिलित है। इन अन्तिम पदों में कथा की समाप्ति, स्वपरिचय तथा रचनाकाल आदि को स्थान दिया गया है। 'बारामासा प्रह्लाद' में समाप्ति के अन्तिम पद के अतिरिक्त बारामासे के आरम्भ में भी दो पद लिखे गये हैं। प्रथम पद में गणेश तथा गुरु की स्तुति की गई है और द्वितीय में कथा की भूमिका। 'बारामासा हरिश्चन्द्र' में भी इसी पद्धति पर दो आरम्भिक पदों की व्यवस्था की गई है। प्रथम पद में ईश-स्तुति तथा गुरु-वन्दना और द्वितीय में सरस्वती-वन्दन किया गया है। इन दोनों बारामासों में प्रत्येक मास को एक-एक पद में सीमित न करके सभी मासों को बहुपदी भी बनाया गया है।

कथासार :

प्रस्तुत संग्रह चन्दूलाल कृत आठ बारामासों का संकलन है। ये आठों बारामासे कथा वैविध्य से परिपूर्ण हैं। इनमें हिन्दू धर्म की पौराणिक कथाएँ भी हैं, साधारण पाठक के लिए ज्ञानोपदेश भी तथा जैन धर्म की व्याख्या भी उपलब्ध है। नीचे इन बारामासों का कथासार संक्षेप में प्रस्तुत किया जाता है।

बारामासा श्री रामचन्द्र :

अयोध्या नामक नगर में रघुवंशी राजा दशरथ राज्य करते थे। सन्तान विहीन होने के कारण उन्होंने भगवान् विष्णु की तपस्या की। भगवान् ने प्रकट होकर कहा, "वर माँगो।" दशरथ ने कहा, "आप जैसा पुत्र प्राप्त हो।" विष्णु "तथास्तु" कह कर निज धाम पधारे तो देखा कि समस्त सृष्टि में अपने जैसा कोई भी नहीं है। तब अपना वचन पूरा करने के लिये स्वयं भगवान् ने दशरथ के घर तथा माया ने सीता के रूप में राजा जनक के घर जन्म लिया। उधर मुनि विश्वामित्र भारी संकट में थे। राक्षस उनका प्रत्येक यज्ञ भंग कर देते थे। मुनिगण उनके अत्याचारों से बहुत दुःखी थे। एक बार ऋषि विश्वामित्र अयोध्या पधारे और राम तथा लक्ष्मण को मांग कर ले आए। श्री राम ने राक्षसों का नाश करके मुनि का यज्ञ सम्पूर्ण कराया तथा फिर जनकपुरी की ओर प्रस्थान किया। मार्ग में अहिल्या का उद्धार किया। जनकपुरी में राजा जनक ने सीता स्वयंवर रचाया हुआ था। शर्त थी शिव का धनुष

उठाने की। राम ने धनुष को उठाया ही नहीं, उठा कर तोड़ भी दिया। फलतः उनका विवाह सीता से हुआ। अवधपुरी पहुँचकर दशरथ ने राम को राज्य-तिलक देने की इच्छा व्यक्त की। नगाड़ों की ध्वनि सुनकर कैकेई के मन में ईर्ष्या का भाव जागृत हो उठा। दशरथ महलों में आए तो देखा कैकेई का महल सुनसान पड़ा है। बहुत चिंतित हुए। देखा, कैकेई फ़र्श पर पड़ी है। राजा ने स्वयं उसे उठाया और उदासी का कारण पूछा। कैकेई ने प्रथम वर से भरत के लिए राज्य तथा दूसरे से राम के लिए बनवास माँगा। दशरथ ने चिरौरी की कि राम को बनवास न हो परन्तु कैकई न मानी। लक्ष्मण तथा सीता सहित श्री राम वन को चले गये। शोकाकुल दशरथ की मृत्यु हुई। श्री राम ने रावण को मार कर पापों का नाश किया तथा वे लंका का राज्य विभीषण को देकर, चौदह वर्ष के बाद, अयोध्या लौट आए।

बारामासा नेमिनाथ :

जैन धर्म के बाईसवें तीर्थंकर नेमिनाथ की बारात जूनागढ़ पहुँची। नेमिनाथ वस्त्राभूषणों से सुसज्जित, दूल्हा बने, स्वर्ण रथ में विराजमान थे। अनेक पशुओं को देखकर उन्होंने उनके एकत्रित होने का कारण पूछा तो मालूम हुआ कि बरातियों के भक्षणार्थ इनका वध किया जायेगा। नेमिनाथ का मन दया से भर आया तथा उन्होंने रथ गिरनार पर्वत की ओर मोड़ लिया। सभी भूषण उतार फेंके और प्रभु भक्ति से चित्त लगा लिया। दुल्हिन राज-कुमारी राजुल को विदित हुआ तो वह भी साठ सखियों को साथ लेकर नेमि-नाथ के पास पहुँची और उनसे प्रार्थना की कि 'मुझे भी साथ ले चलिये। मैं भी तपस्या करके इस असार संसार रूपी सागर से पार उतरूँगी।' दोनों दयावान महान् आत्माओं ने काम, क्रोध, लोभ, मोह तथा अहंकार त्याग कर तपस्या की तथा फलतः मोक्ष प्राप्त किया।

बारामासा मूर्ति-पूजन :

जैन धर्म के वे साधू, जो मुख पर पट्टी बाँधते हैं, शास्त्रों का ठीक अर्थ नहीं बताते। वास्तविक जैन धर्म मूर्ति-पूजा में विश्वास करता है। धूप, दीप, नैवेद्य आदि से प्रभु-मूर्ति का पूजन मोक्ष के द्वार उन्मुक्त करता है। आचारंग में यही लिखा हुआ है। दशवैकालिक तथा भगवति सूत्र में भी ऐसी ही व्यवस्था है। कुगुरु इन ग्रंथों के मूर्ति पूजन सम्बन्धी अंशों को नज़र अन्दाज़ कर जाते हैं। अष्टद्रव्यी पूजा की उपेक्षा करके कुगुरुओं ने अनेक पंथ बना लिए हैं। परन्तु जैन धर्म के गणधरों ने मूर्ति-पूजा की व्यवस्था की है। मूर्ति पूजन ही सांसारिक कर्मों का नाश करके अमरत्व प्रदान करता है। यह संसार एक

तमाशा मात्र है। मृत्यु ही प्रत्येक जीव का परिणाम है। इसलिए तीनों लोकों तथा चौदह भुवनों में विख्यात पूजन विधि द्वारा ही भगवद् स्मरण करना चाहिए ताकि भवबन्धनों से मुक्ति प्राप्त हो सके।

•

बारामासा प्रह्लाद :

मुल्तान नरेश हिरण्यकशिपु के यहाँ प्रह्लाद का जन्म हुआ। हिरण्यकशिपु 'राम नाम' का विरोधी, बड़ा शूरवीर राजा था तथा उसने अपनी प्रजा को आदेश दे रखा था कि कोई भी राम का नाम न ले। भयभीत लोग राजा का ही नाम जपते थे। पाँच वर्ष की आयु में प्रह्लाद खेलते-खेलते एक कुम्हार के घर जा पहुँचा। उसने देखा कि बर्तन पकाने वाली आग के पास एक बिल्ली उदास बैठी है। कारण मालूम हुआ कि इसके बच्चे आवाँ में हैं तथा अब आग जल चुकी है। कुम्हारिन राम की भक्त थी। उसने भगवान से प्रार्थना की। तीसरे दिन आवाँ शान्त हुआ तो बच्चे जीवित पाये गये। प्रह्लाद राम का गुणगान करते हुए राज प्रासाद पहुँचे तो उनकी माँ भयभीत हो गई। राजा से कहकर उसने प्रह्लाद की शिक्षा दीक्षा आरम्भ करवा दी। शुक्र आसुरी विद्या पढ़ाने लगा परन्तु प्रह्लाद पाटी पर 'राम राम' ही लिखते रहे। दुःखी होकर शुक्र ने प्रह्लाद को लाकर दरबार में पेश कर दिया। राजा द्वारा फाँसी का आदेश भी प्रह्लाद को धर्म से विचलित न कर सका। तीन बार फाँसी का फंदा टूटा, प्रह्लाद को फाँसी न दी जा सकी। आदेश हुआ प्रह्लाद को पर्वत से नीचे फेंक दिया जाए। वैसा ही किया गया। प्रह्लाद को तनिक भी चोट न लगी।

तब नृप ने सभा बुलवा कर प्रह्लाद के मारने का उपाय पूछा। हिरण्यकशिपु की बहन ने कहा "मुझे वरदान प्राप्त है कि अग्नि मुझे नहीं जलाएगी।" फलतः वह प्रह्लाद को गोद में लेकर चिता में बैठ गई। भक्त प्रह्लाद जीवित रहे और बूआ जल गई। क्रुद्ध नृप ने आठ धातुओं से विनिर्मित थम्भ अग्नि में तपाया और प्रह्लाद से उसका आलिंगन करने को कहा। प्रह्लाद ने भगवान का स्मरण किया तो देखा एक चींटी तप्त थंभ पर चल रही है। वे तुरन्त थम्भ से लिपट गए। तप्त थम्भ जल समान शीतल हो गया। हिरण्यकशिपु ने प्रह्लाद को मारने के लिए तलवार खींची तो थम्भ फाड़कर भगवान् नृसिंह प्रगट हुए। हिरण्यकशिपु के पास वरदान था कि वह न दिन में मरेगा, न रात में, न अन्दर, न बाहर, न नर के हाथों से, न पशु से। नृसिंह न नर थे न पशु; समय, न दिन था, न रात (दोनों वक्त मिल रहे थे) उन्होंने दहलीज़ पर रखकर (न अन्दर, न बाहर) हिरण्यकशिपु का पेट फाड़ डाला। इस प्रकार पापों का नाश हुआ तथा प्रह्लाद को राज्य प्राप्त हुआ।

•

बारामासा हरिश्चन्द्र :

अवधपुरी के राजा हरिश्चन्द्र के दानवीर होने की गाथा जब नारद मुनि ने इन्द्र के दरबार में सुनाई तो इन्द्र अपना सिंहासन डोलने की आशंका से कंपित हो उठे। उन्होंने सभी ऋषियों मुनियों से सहायता की प्रार्थना की। इन्द्र की प्रार्थना स्वीकार करके ऋषि विश्वामित्र शूकर का रूप धारण करके पृथ्वी पर आए तथा इस शूकर ने हरिश्चन्द्र का उपवन उजाड़ना आरम्भ किया। मालियों की पुकार सुन कर राजा हरिश्चन्द्र ने धनुष बाण उठाया तथा सैनिकों सहित शूकर को पकड़ने के लिए उपवन में पहुँचे। उपवन से भागते शूकर का पीछा करते हुए, घोड़े पर सवार राजा जंगल में जा पहुँचे तथा जब उन्होंने शूकर पर तीर छोड़ने का यत्न किया तो वह अलोप हो गया। थके हारे हरिश्चन्द्र पानी पीने के लिए गंगातट पर पहुँचे तो देखा वहाँ एक ब्राह्मण दो बालक और दो बालिकाओं को साथ लिए बैठा है। ब्राह्मण के प्रस्ताव पर जब राजा ने गंगा स्नान किया तथा उसकी इच्छानुसार बालकों का विवाह कार्य सम्पन्न कराया, तो बालकों ने राजपाट, धनधान्य एवं घरबार दान में मांग लिया। हरिश्चन्द्र ने पानी से भरा कलश हाथ में लिया और सभी कुछ सहर्ष दान कर दिया। तब कपटवेषी ब्राह्मण ने सौ भार स्वर्ण, विवाह कराने की दक्षिणा के रूप में माँगा। हरिश्चन्द्र ने वह भी देने की प्रतिज्ञा की तथा ब्राह्मण को साथ लेकर राजधानी की ओर आए। रास्ते में उनका पुत्र रोहित मिला तथा हरिश्चन्द्र ने उसे सारी स्थिति से अवगत कराया। रोहित ने घर जाकर अपनी माता से सब हाल कहा तो माता मूर्छित हो गई परन्तु फिर सावधान होकर नृप के पास पहुँचीं और अपने समस्त आभूषण उतार कर ब्राह्मण को दे दिए। इन आभूषणों का वज़न चालीस भार ही हो पाया। तब राजा ने ब्राह्मण से कहा कि आप हम तीनों को बेच कर शेष धनराशि प्राप्त कर लें। ब्राह्मण ने काशी ले जाकर उन तीनों की बोली लगाई। एक वेश्या रानी तारा को खरीदने को उद्यत हुई तो रानी ने अपने इष्ट भगवान् सूर्य से लाज बचाने की प्रार्थना की। सूर्य भगवान् ने रानी की प्रार्थना सुन कर हज़ारों वानर उस स्थान पर भेज दिए, जिन्होंने वेश्या के कपड़े फाड़ डाले। परिणामस्वरूप वेश्या वहाँ से भाग निकली। तब जगन्नाथ नामक एक सेठ ने चालीस भार स्वर्ण देकर रानी तथा रोहित को खरीद लिया। हरिश्चन्द्र को कलुआ नामक राजभंगी के हाथों बेच कर ब्राह्मण ने शेष बीस भार स्वर्ण भी प्राप्त कर लिया। रानी और रोहित सेठ के घर में सेवा करने लगे तथा हरिश्चन्द्र को अपनी पत्नी के हवाले करके कलुआ श्वसुर-घर चला गया।

कुछ दिनों बाद कलुआ लौटा तो उसने देखा हरिश्चन्द्र ने इतने दिनों में कुछ भी नहीं खाया है। वह पत्नी पर बहुत बिगड़ा। पत्नी ने कहा कि इसने

खाने के लिए कभी कुछ माँगा ही नहीं तो मैं क्या देती। कलुआ तब राजा को लेकर हलवाई की दुकान पर गया और कहा कि जितने दिन भी यह व्यक्ति, जो कुछ भी खाना चाहे, इसे देते रहो, पैसे मैं अदा करूँगा। सत्तू और मीठा लेकर हरिश्चन्द्र गंगा तट पर पहुँचे। स्नानोपरान्त जब वे खाने को उद्यत हुए तो विश्वामित्र ब्राह्मण रूप धारण करके सम्मुख उपस्थित हो गए और सारी सामग्री भिक्षा में ले गए। सात दिन तक यही क्रम चलता रहा कि हरिश्चन्द्र खाने लगते और ब्राह्मण भिक्षा में खाद्य सामग्री ले जाता।

कलुआ ने हरिश्चन्द्र को शमशान में रहने का आदेश दिया। वहाँ राजा को प्रति मुर्दा पाँच टके वसूल करना था तथा नित्य एक घड़ा पानी कलुआ के घर पहुँचाना था। हरिश्चन्द्र जब पानी भरने के लिए गंगा तट पर पहुँचे तो वहाँ रानी भी, संयोगवश, पानी लेने पहुँची हुई थी। भूख से व्याकुल राजा ने रानी से घड़ा उठवा देने के लिए कहा लेकिन रानी ने इनकार कर दिया कि, "मैं ब्राह्मण के घर का पानी भरती हूँ और तुम शूद्र के घर का। मैं धर्म भ्रष्ट न होने दूंगी। तुम खाली घड़ा कंधे पर रखकर गंगा में उतर जाओ। पानी जब कंधे तक आएगा, घड़ा स्वयं भर जाएगा।"

एक दिन रोहित फूल तोड़ने के लिए बाग में पहुँचा तो विश्वामित्र ने सर्प-रूप धारण करके उसे डस लिया। पुत्र वियोग से विह्वल रानी ने अपनी साड़ी फाड़ कर उसे कफन ओढ़ाया तथा मरघट में ले जाकर चिता में रख दिया। वह आग देने लगी तो हरिश्चन्द्र ने कलुआ द्वारा निर्धारित कर माँगा। विवश रानी ने अपनी चादर उतार कर उसे दी और पुत्र की चिता को अग्नि देकर उसी में बैठ गई। उसी क्षण ऐसी वर्षा हुई कि चिता की अग्नि शान्त हो गई।

उधर उसी समय विश्वामित्र भेड़िए का रूप धारण करके राजभवन से काशी-नरेश के पुत्र को ले भागा और उसे मार कर मरघट में बैठी नग्न-शरीरा रानी के पास फेंक दिया। फिर स्वयं ही ज्योतिषी का रूप धारण करके राजा को बताने लगा कि एक डायन आपके पुत्र को मरघट में ले गई है। राजा ने तुरन्त सैनिक भेजे जो रानी तारा को पकड़ कर राजा के सम्मुख ले आए। राजा ने कलुआ को आदेश दिया कि इस स्त्री को मेरे पुत्र की लाश के पास ले जाकर इसका शीश काट दो। कलुआ तारा को लेकर शमशान पहुँचा तथा उसने हरिश्चन्द्र को तारा-वध का आदेश दिया। हरिश्चन्द्र ने ज्यों ही तलवार उठाई भगवान् विष्णु का सिंहासन डोल उठा तथा भगवान् ने हरिश्चन्द्र का हाथ पकड़ लिया। दोनों बालक जीवित हो उठे तथा हरिश्चन्द्र पत्नी और पुत्र सहित अवधपुरी लौट आए, जहाँ अनेक वर्षों तक राजपाट का सुख भोग कर उन्होंने अन्ततोगत्वा परम गति प्राप्त की।

बारामासा हितोपदेश :

हे मनुष्य ! तू अपने मन में इस संसार की असारता पर विचार कर। यह संसार चार दिनों का खेल है। दीन हीन, बुद्धिमान, भले बुरे, कोई भी हों, अन्त सभी का मृत्यु है। रूपवान् हो या कुरूप, बली हो या महान्, पापी हों या पुण्यवान्, मृत्यु सभी के लिए अवश्यम्भावी है। इसलिए हे व्यक्ति ! मान करना त्याग दे क्योंकि तेरा जीवन पानी के बुदबुदे के समान क्षण भंगुर है।

बारामासा श्री कृष्ण :

कंस के कारागार में, देवकी और वसुदेव के पुत्र के रूप में, भगवान् विष्णु ने कृष्णावतार धारण किया। पहरेदार निद्रामग्न हो गए तथा कारागृह के बंधन स्वतः मुक्त हो गए। कृष्ण को लेकर वसुदेव ने गोकुल की ओर प्रस्थान किया। यमुना का जल बहुत चढ़ा हुआ था। टोकरी में पड़े कृष्ण ने अपना पाँव, टोकरी से बाहर निकाला, जिसे छूकर यमुना का पानी उतर गया। पार कर नदी, वसुदेव गोकुल पहुँचे तथा यशोदा की कोख से जन्मी पुत्री को लेकर, कृष्ण को वहाँ छोड़ आए। कारागार के बंधन पूर्ववत् पड़ गए। चैतन्य हुए प्रहरियों ने कंस को सूचना दी कि वसुदेव के यहाँ पुत्री का जन्म हुआ है। निर्दयी कंस ने धोबी बुलवा कर आदेश दिया तथा जब धोबी ने कन्या को तख्ते पर पटका तो वह बिजली का रूप धारण करके, आकाश की ओर चल दी। यह कह कर कि तेरा काल तो गोकुल में है।

तब कंस ने पूतना नामक राक्षसी को गोकुल भेजा। नारी वेश धारण करके, तथा स्तन पर विष का लेप करके, पूतना ने नन्द के घर पहुँचकर कृष्ण को गोद में उठा लिया तो कृष्ण ने स्तन के माध्यम से ही उसके प्राण खींच लिए। मुरली मनोहर कृष्ण ने गोकुल में अनेक लीलाएँ कीं। गोपियों के साथ रास रचाई, कालियदह को नथा, तृण-वर्त एवं वत्सासुर को मारा। तब अक्रूर को भेजकर कंस ने कृष्ण को मथुरा बुलवा लिया। मल्ल युद्ध में कृष्ण ने मुष्ट तथा चण्ड नामक राक्षसों को पछाड़ा, कुवलिया पीड़ नामक राक्षस का नाश किया और फिर कंस को मौत के घाट उतार कर, पृथ्वी को पापों के भार से मुक्त किया।

बारामासा ज्ञानोपदेश :

यह संसार असार है, मिथ्या है। मोह माया का जंजाल यहाँ फैला हुआ है। केवल राम का नाम ही है, जिसके निरन्तर स्मरण तथा भजन द्वारा मनुष्य भवसागर से पार उतर सकता है। सभी मनुष्य अपने अपने भाग्यानुसार ही वस्तुएँ प्राप्त करते हैं। किसी के धन धान्य को देखकर लोभ नहीं करना

चाहिए। जो कुछ अपने पास है उसी से सन्तोष करना चाहिए। जिन लोगों ने भगवद् भजन किया उनका जन्म सफल हो गया। मृत्यु सभी के लिए अवश्यं-भावी है। यह कलयुग नहीं, कर युग है। जो व्यक्ति जैसा करता है, वैसा ही फल प्राप्त कर लेता है। व्यर्थ में समय नष्ट करने की बजाय प्रभु भक्ति में ध्यान लगाने से ही सद्गति प्राप्त हो सकती है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि के त्याग से ही परलोक सुधरता है। अन्त समय कोई साथ नहीं जाता, कोई सहायक नहीं होता। उस समय शुभ कार्य ही सहायक होते हैं। अतः मनुष्य को ईश्वर भक्ति द्वारा सुकर्मों में प्रवृत्त होना चाहिए।

कवि की मौलिकता :

यद्यपि प्रस्तुत बारामासों में वर्णित कथाएँ पौराणिक ही हैं, परन्तु इनमें कवि की मौलिकता भी स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। चन्दूलाल ने प्रस्तुत कथाओं को ज्यों का त्यों ग्रहण करने के स्थान पर, अपनी कल्पना शक्ति द्वारा, इनमें मौलिकता का सुन्दर समावेश किया है।

'बारामासा श्री रामचन्द्र' में वर्णित प्रसिद्ध रामकथा मात्र इतिवृत्तात्मकता पर आधारित नहीं हैं, अपितु कवि ने इसे मौलिक ढंग से प्रस्तुत करने का रोचक प्रयास भी किया है। यहाँ पुत्र-प्राप्ति के लिए राजा दशरथ, तपस्या द्वारा भगवान् विष्णु को प्रसन्न करके, उनसे उनके जैसा ही पुत्र प्राप्त करने का वरदान प्राप्त करते हैं, जबकि रामायण ग्रन्थों में, दशरथ को सन्तान प्राप्ति ऋष्य शृंग द्वारा सम्पन्न किए गए पुत्रेष्ठि यज्ञ के प्रभाव से ही होती है :—

इष्टिं तेऽहं करिष्यामि पुत्रीयां पुत्रवाराणात्।
अथर्वशिरसि प्रोक्तैर्मन्त्रैः सिद्धां विधानतः ॥२॥[1]

रामायण ग्रन्थों में, जिस तपस्या के फलस्वरूप भगवान् विष्णु को मनुष्य रूप में अवतरित होना पड़ता है, वह तपस्या दशरथ ने नहीं, बल्कि कश्यप और अदिति ने की थी, जो बाद में दशरथ तथा कौशल्या के रूप में जन्मे थे :—

कस्यप अदिति महातप कीन्हा। तिन्ह कहुँ मैं पूरब वर दीन्हा।
ते दशरथ कौसल्या रूपा। कोसलपुरी प्रगट नर भूपा।[2]

कश्यप की तपस्या वाली बात ही अध्यात्म रामायण में इस प्रकार वर्णित है :—

कश्यपस्य वरो दत्तस्तपसा तोषितेन मे ॥२५॥
याचितः पुत्रभावाय तथेत्यङ्गीकृतं मया।

---

१. वाल्मीकि रामायण : बालकाण्ड : पंचदशः सर्ग।
२. रामचरितमानस : बालकाण्ड : पृ० १८७।

स इदानीं दशरथो भूत्वा तिष्ठति भूतले ॥२६॥[1]

तथा विष्णु अपने जैसा कोई और दिखाई न देने के कारण, दशरथ के यहाँ जन्म नहीं लेते अपितु पृथ्वी की प्रार्थना पर, देवताओं द्वारा मानवरूप धारण करके, रावण-वध करने की विनती के फलस्वरूप अवतार धारण करते हैं :—

इत्येद वचनं श्रुत्वा सुराणां विष्णुरात्मवान् ।
पितरं रोचयामास तदा दशरथं नृपम् ॥८॥[2]

चन्दूलाल की कल्पनाशीलता ने कैकेयी के प्रति दशरथ के अगाध प्रेम को दिखाने के लिए, भूमि पर पड़ी शोकमग्न कैकेयी को स्वयं दशरथ के हाथों से उठवाया है। रामायण ग्रन्थों में ऐसा उपलब्ध नहीं है। अध्यात्म रामायण में कोपभवन में लेटी कैकेयी के शरीर पर धीरे धीरे हाथ फेरते हुए दशरथ, उसके दुखी होने का कारण पूछते हैं :—

उपविश्य शनैर्देहं स्पृशन्वै पाणिनाब्रवीत ॥६॥[3]

तथा रामचरितमानस में वे, धरती पर लेटी कैकेयी के निकट जाकर ही उसके शोकाकुल होने का कारण पूछते हैं :—

जाइ निकट नृप कह मृदु बानी ।
प्रान प्रिया केहि हेतु रिसानी ।[4]

चन्दूलाल की कल्पनाशीलता, कैकेयी को दो वर देने के बाद, दशरथ को इतना कमज़ोर तथा मानसिक-बलहीन अनुभव करती है कि वे राम का सामना करने की सामर्थ्य तथा साहस भी खो देते हैं। इसीलिए चन्दूलाल, दशरथ द्वारा राम को कोपभवन में न बुलवा कर, उनके हाथों से राम के नाम बनगमन का आदेश लिखवा कर भेज देते हैं, जिसे देखते ही राम वन को चले जाते हैं। जबकि रामायण ग्रन्थों में दशरथ, सुमन्त्र द्वारा राम को अपने पास बुलाते हैं :—

निरखि बदन कहि भूप रजाई ।
रघुकुल दीपहि चलेउ लेवाई ।[5]

जहाँ पिता को चिन्तित देखकर राम, कैकेयी से कारण पूछते हैं। कैकेयी उन्हें बताती है कि मैंने एक वर से भरत के लिए राज्य तथा दूसरे से तुम्हारे लिए चौदह वर्ष का बनवास माँगा है। यहीं राम वन को जाना स्वीकार कर

१. अध्यात्म रामायण : बालकाण्ड : द्वितीय सर्ग ।
२. बाल्मीकीय रामायण : ,, : षोडशः सर्ग ।
३. अध्यात्म रामायण : अयोध्या काण्ड : तृतीय सर्ग ।
४. रामचरितमानस : ,, : पृ० ३५५ ।
५. ,, : ,, : पृ० ३६६ ।

लेते हैं[1] :—

एवमस्तु गमिष्यामि वनं वस्तुमहं त्वितः ।
जटाचीरधरो राज्ञः प्रतिज्ञामनुपालयन् ॥२॥[2]

इस प्रकार हम देखते हैं, कि चन्दूलाल की कल्पनाशीलता ने प्रसिद्ध राम-कथा के कई अंशों को अपनी मौलिकता से सुसज्जित करके, नूतन ढंग से प्रस्तुत किया है ।

'बारामासा नेमिनाथ' में भी, कवि ने, जैन धर्म के बाईसवें तीर्थंकर नेमिनाथ के प्रवृज्या धारण करने तथा तीर्थंकर बनने की कथा को उसके प्रचलित रूप में ग्रहण नहीं किया अपितु कवि की मौलिकता यहाँ भी चमत्कृत होती है ।

जैन धर्म से सम्बंधित पुस्तकों में नेमिनाथ के दीक्षा प्राप्त करने के बाद, राजुलमती के प्रवृज्या-ग्रहण की घटना तो वर्णित है, परन्तु वह संसार से उदासीन होकर लौटे जा रहे अपने दूल्हा नेमिनाथ के पीछे नहीं भागती । नेमिनाथ के चले जाने के बाद परम सुन्दरी, सर्वलक्षण सम्पन्न राजकन्या राजुलमती सोचती है कि, "उन्होंने युवा होने पर भी मेरे प्रति तनिक मोह नहीं किया। वे धन्य हैं । मेरे जीवन को धिक्कार है कि मैं अब भी उनके प्रति मोह रखती हूँ । अब मुझे इस संसार में रहकर क्या करना है ? मेरे लिए भी यही श्रेयस्कर है कि मैं दीक्षा ले लूं ।" ऐसा दृढ़ विचार करके राजुल अपने भ्रमर जैसे केशों को उखाड़ डालती है तथा सर्व इन्द्रियों को जीत कर, रुण्ड मुण्ड होकर, दीक्षा के लिए तैयार हो जाती है ।[3] प्रस्तुत बारामासा में राजुल को इस प्रकार सोच विचार करने का अवसर नहीं मिलता अपितु वह यह समाचार पाते ही कि जूनागढ़[4] पहुँची बारात को छोड़कर, नेमिनाथ तप करने के लिए जा रहे हैं, साठ सखियों सहित जाकर उनका मार्ग रोक लेती है । अनुनय विनय करके वह नेमिनाथ को, उसे साथ ले चलने पर राज़ी कर लेती है ।

चन्दूलाल की कल्पनाशीलता ने यह भी स्वीकार नहीं किया कि राजुल अपने 'प्रिय' के साथ तप करने के स्थान पर उनके छोटे भाई रथनेमि के साथ तप करे ।[5] राजुल संसार की असारता से परिचित होकर या सांसारिक मोह-माया से वितृष्णा-वश दीक्षा ग्रहण नहीं करती अपितु वह नेमिनाथ के मोह-वश

१. अध्यात्म रामायण : अयोध्या काण्ड : तृतीय सर्ग ।
२. बाल्मीकीय रामायण : ,, : एकोनविशः सर्ग ।
३. श्रीचन्द रामपुरिया : अर्हत् अरिष्टनेमि और वासुदेव कृष्ण : पृ० १०८ ।
४. इस तथ्य की पुष्टि के लिए देखिए :
डॉ० हीरालाल जैन : भारतीय संस्कृति में जैन धर्म का योगदान : पृ० २० ।
५. श्रीचन्द रामपुरिया : अर्हत् अरिष्टनेमि और वासुदेव कृष्ण : पृ० १११ ।

उनके पीछे भागती है। वह नेमिनाथ से उनके इस प्रकार लौटने का कारण पूछती है तथा नेमिनाथ उसे संसार की असारता एवं अपने निर्णय से परिचित कराते हैं। अन्यथा वह अकेली नेमिनाथ के पीछे जाती, साठ सखियों को संग न ले जाती। नेमि द्वारा प्रदत्त ज्ञान से, संसार की वास्तविकता राजुल पर स्पष्ट हो जाती है तथा वह नेमि के साथ गिरनार पर्वत पर जाकर तप करके, मोक्ष पद प्राप्त करती है। कवि की मौलिकता ने, इस प्रकार कथा को नया मोड़ देकर इसे सहज तथा गतिशील बना दिया है।

'बारामासा मूर्तिपूजन', 'बा० हितोपदेश' तथा 'बा० ज्ञानोपदेश' इतिवृत्तात्मक न होकर उपदेशात्मक हैं। यद्यपि इन बारामासों में वर्णित संसार की असारता तथा दिए गए उपदेश प्रायः सन्तों की बानियों में उपलब्ध हैं परन्तु यहाँ कवि ने मौलिक ढंग से ही इनका प्रस्तुतीकरण किया है।

'बारामासा प्रह्लाद' में भी, कवि ने भक्त प्रह्लाद की पौराणिक कथा को मौलिक ढंग से प्रस्तुत किया है। बालक प्रह्लाद का कुम्हारिन के घर जाना, बिल्ली के बच्चों का आवे में से जीवित निकलना, प्रह्लाद का कुम्हारिन को धर्म माता बनाना, होलिका का प्रह्लाद को गोद में लेकर अग्नि में बैठना आदि चन्दूलाल द्वारा वर्णित घटनाओं की पुष्टि न 'विष्णु पुराण' से ही होती है और न 'श्रीमद्भागवत महापुराण' से ही। कथा के कलेवर को शिथिलता से बचाने के लिए चन्दूलाल प्रह्लाद को सीधे ही शुक्राचार्य के पास, पढ़ने के लिए भेज देते हैं, जबकि 'विष्णुपुराण' तथा 'भागवत महापुराण' में प्रह्लाद को पहले शुक्राचार्य के पुत्र शुण्ड तथा अमर्क पढ़ाते हैं :—

> पौरोहित्याय भगवान् वृतः काव्यः किलासुरैः।
> शण्डामर्को सुतो तस्य दैत्यराज गृहान्तिके ॥१॥
> तौ राज्ञा प्रापितं बालं प्रह्लादं नयकोविदम्।
> पाठ्यामास्तु पाठ्यानन्यांश्चासुर बालकान्[१] ॥२॥

और फिर शण्डामर्क द्वारा हिरण्यकशिपु के पास लाए गए प्रह्लाद से राजा द्वारा शिक्षा सम्बंधी प्रश्न पुछवाने[२] तथा पुनः प्रह्लाद को शुक्राचार्य के निर्देशन में पढ़ने के लिए भेजने[३] के स्थान पर, चन्दूलाल सीधा ही प्रह्लाद को शुक्र द्वारा विद्या दिलवाते हैं। शुक्र स्वयं मारपीट करके भी जब प्रह्लाद को 'राम राम' लिखने से नहीं हटा सका, तो वह स्वयं ही उसे राजा के सामने लाकर उसकी शिकायत कर देता है।

---

१. श्री मद्भागवत महापुराण : सप्तम स्कंध : पाँचवाँ अध्याय।
२. विष्णु पुराण : प्रथमांश : अध्याय १७ : श्लोक १३।
३. श्रीमद्भागवत महापुराण : सप्तम स्कंध : पंचमोध्याय : श्लोक १८।

चन्दूलाल पाठकों की उत्सुकता को शान्त होने से बचाने के लिए अनेक अन्य घटनाओं (यथा दैत्यों द्वारा प्रह्लाद के मर्मस्थलों पर प्रहार करना[१], हिरण्यकशिपु का स्वयं प्रह्लाद को मारना[२], हिरण्यकशिपु का नृसिंह अवतार से युद्ध[३] करना आदि) के वर्णन में भी संकोच से काम लेते हैं। वे नृसिंह अवतार के प्रगट होते ही, हिरण्यकशिपु को प्राप्त वरदान की ओर संकेत करके, उसका वध करवा देते हैं।

'बारामासा हरिश्चन्द्र' की कथा में भी, कवि की मौलिकता ने अनेक अंगों को अद्भुत नाटकीय तथा मौलिक ढंग से प्रस्तुत किया है, जिसकी स्वीकारोक्ति में कवि स्वयं कहता है कि :—

यह भक्त हरिचन्द की कथा कही निज मती अनुसार कर।

'आरण्यक पुराण' तथा 'देवी भागवत पुराण' में हरिश्चन्द्र की दानवीरता से न तो इन्द्र का सिंहासन डोलता है तथा न मुनि विश्वामित्र उनके सिंहासन की रक्षा में शूकर, ब्रह्मचारी, भेड़िया, ज्योतिषी आदि का रूप धारण करके हरिश्चन्द्र को अनेकानेक कष्ट देते हैं। आरण्यक पुराण में लिखा है कि राजा हरिश्चन्द्र एक दिन मृगया के लिए वन में जाते हैं। वहाँ उन्हें, स्त्रियों की 'रक्षा करो', 'रक्षा करो' की आवाजें सुनाई देती हैं। राजा बड़े हैरान होते हैं कि मेरे राज्य में कौन दुर्बुद्धि अन्याय का आचरण कर रहा है। तभी 'विघ्नराज' उनके शरीर में प्रविष्ट हो जाते हैं। क्रोधित हुए हरिश्चन्द्र उस स्थान पर पहुँचते हैं, जहाँ क्षमा, मौन तथा चित्त के संयम द्वारा मुनि विश्वामित्र विद्याओं के साधन में अहर्निश हैं। यही विद्याएँ अत्यन्त भयभीत होकर, नारी रूप में 'रक्षा करो', कहते हुए रो रही होती हैं। राजा के क्रोधपूर्ण वचनों को सुनकर मुनि विश्वामित्र भी क्रुद्ध हो जाते हैं तथा क्रोध करते ही उनकी सारी विद्या नष्ट हो जाती है।

क्रुद्धेचर्षिवरेतस्मिन्नेशुर्विद्या क्षणेमता[४] ।।१४।।

मुनि को क्रोधित हुआ देखकर राजा हरिश्चन्द्र कहते हैं कि, "हे महर्षि ! मेरा धर्म यही है कि धर्मानुसार दान, रक्षा तथा धनुष धारण करके युद्ध करूँ :—

दातव्यंक्षं तव्यं च धर्म ज्ञेन महीक्षिता।
चापं चोद्यम्ययोद्धव्यं धर्मशास्त्रानुसारतः[५] ।।१८।।

---

१. श्रीमद्भागवत महापुराण : सप्तम स्कंध : पंचमोऽध्याय: श्लोक-३९ ।
२. ,, : ,, : अध्याय-८ : श्लोक-१५ ।
३. ,, : ,, : ,, : श्लोक-२८, २९ ।
४. आरण्यक पुराण : हरिश्चन्द्रोपाख्यान :
५. ,, : ,,

तब विश्वामित्र राजा से, राजसूय यज्ञ में उनका राजपाट, घरबार, सभी कुछ दान में माँग लेते हैं, जिसे राजा तुरन्त स्वीकार कर लेते हैं।

'देवी भागवत पुराण' में यह कथा तनिक भिन्न रूप में वर्णित है। वहाँ राजा 'रक्षा करो' की अनेक आवाजें नहीं सुनते अपितु 'कमना' नामक एक ही स्त्री की करुण पुकार सुनते हैं, जिसके लिए महर्षि विश्वामित्र घोर तपस्या कर रहे होते हैं। अपने राज्य में संत्रस्ता नारी की सहायतार्थ राजा हरिश्चन्द्र मुनि के पास जाकर उनसे ऐसा घोर तप त्याग देने की प्रार्थना करते हैं, जिससे क्रुद्ध होकर मुनि तप त्याग देते हैं :—

कोपाविष्टेन मनसा प्रतीकारमथाकरोत्।
विचिंत्य बहुधा चित्ते दानवं घोरविग्रहम् ॥१३॥
प्रेषयामास तद्देशं विधाय सूकराकृतिम्।
सोऽतिकायो महाकालः कुर्वन्नाद सुदारुणम्[1] ॥१४॥

राजा वहाँ से अपने घर लौट आते हैं तथा क्रुद्ध मुनि एक घोर दानव उत्पन्न करके, उसे शूकर रूप देकर, राजा के उद्यान में भेज देते हैं।

देवी भागवत पुराणानुसार शूकर का पीछा करते हुए राजा घोर वन में पहुँचते हैं, तो उन्हें दो बालक तथा दो बालिकाओं को लिए बैठा ब्राह्मण नहीं मिलता अपितु एक ही व्यक्ति (ब्राह्मण) मिलता है, जिससे राजा शूकर का पता पूछते हैं। वह ब्राह्मण उन्हें तीर्थ स्नान तथा दान करने के लिए कहता है। राजा वैसा ही करते हैं तो ब्राह्मण उनसे अपने पुत्र के विवाह के लिए धन की याचना करता है :—

अतस्त्वां प्रार्थयाम्यद्य विवाहोमेऽस्ति पार्थिव ॥१२॥
पुत्रस्य च महाभाग तदर्थं देहि मे धनम्।
विवाहं कुरु विप्रेन्द्र ददामि प्रार्थितं तव[2] ॥१३॥

यहाँ विश्वामित्र अपनी योगमाया द्वारा हरिश्चन्द्र को एक दशवर्षीय कन्या के साथ एक बालक दिखा देते हैं। राजा वांछित धन देने का वचन देकर चले जाते हैं तो अगले दिन ब्राह्मण उनके दरबार में आकर दान माँगता है तथा मुंह माँगे दान में राजा का सर्वस्व प्राप्त कर लेता है :—

विश्वामित्रोऽपि राजानम् वंचयित्वाऽऽश्रमं ययौ।
कृतो द्वाह विधिस्तावद्विश्वामित्रोऽब्रवीन्नृपम्[3] ॥१६॥

दान में सर्वस्व प्राप्त करके विश्वामित्र राजा से सौ भार नहीं, अढ़ाई भार

---

१. देवी भागवत पुराण : द्वितीय खण्ड :हरिश्चन्द्रोपाख्यान।
२. " : " : "
३. " : " : "

कंचन, दक्षिणा के रूप में माँगते हैं।

हेमभार द्वयं सार्धं दक्षिणा देहि साम्प्रतम्[१] ।।२७।।

राजा दक्षिणा देने का वचन भी दे देते हैं।

प्रस्तुत बारामासा में वर्णित घटनाओं के अनुरूप, पुराणों में मुनि विश्वामित्र राजा, रानी तथा रोहिताश्व को काशी ले जाकर नहीं बेचते अपितु स्वयं ये तीनों प्राणी काशी जाते हैं, जहाँ पर मुनि बार बार उपस्थित होकर, दक्षिणा का आग्रह करते हैं। राजा को मुनि ने एक महीने की अवधि दी होती है तथा महीने के अन्तिम दिन, रानी के आग्रह पर, हरिश्चन्द्र उसे तथा रोहित को बेचकर मुनि को दक्षिणा का एक अंश दे देते हैं और शेषांश के लिए मुनि विश्वामित्र राजा को चाण्डाल के हाथों बेच देते हैं। पुराणों में ब्राह्मण रूपधारी विश्वामित्र नहीं, स्वयं हरिश्चन्द्र रानी को बेचते हैं :—

कस्यचिद्यदि कार्यं स्याद्दास्या प्राणेष्टयामम ।
स ब्रवीतुत्वरायुक्तो यावत्स्वं धारयाम्हम्[२] ।।१७।।

आरण्यक पुराण में विश्वामित्र न सर्प बन कर रोहित को डसते हैं और न राजा हरिश्चन्द्र पुत्र-दाहार्थ शमशान में आई रानी से कर ही माँगते हैं अपितु दुःखी विह्वल राजा रोहित को चिता पर लेटा कर, उसी चिता में तारा सहित स्वयं जलने को उद्यत होकर, जब अन्तिम बार प्रभु का स्मरण करते हैं तो भगवान् विष्णु नहीं धर्मराज, इन्द्र तथा विश्वामित्र वहाँ प्रगट होते हैं। देवी भागवत पुराण में भी भगवान् विष्णु नहीं अपितु सभी देवता वहाँ प्रगट होते हैं :—

तस्य चिन्तयमानस्य सर्वे देवाः सवासवाः ।
धर्मं प्रमुखतः कृत्वा समाजग्मुस्त्वान्विताः[३] ।।४।।

अस्तु, चन्दूलाल द्वारा प्रस्तुत की गई कथा में वर्णित इन्द्र का सिंहासन डोलना, विश्वामित्र का सहायता के लिए प्रस्तुत होना, शूकर रूप धारण करना, वन में ब्राह्मण रूप धारण करके दो बालक तथा दो बालिकाओं को लेकर बैठना, राजा के हाथों उनका विवाह कार्य सम्पन्न करवाना, तदनन्तर दक्षिणा माँगना, वन से लौट रहे राजा को मार्ग में रोहित का मिलना, रानी का आभूषण उतार कर मुनि को देना, शेष धन प्राप्ति के लिए मुनि का वटुवेश धारण करके तीनों को काशी ले जाकर बेचना, वेश्या का रानी को क्रय करने के लिए उद्यत होना, रानी की सूर्य भगवान् से प्रार्थना, वन्दरों का वेश्या के कपड़े फाड़ना, कलुआ

१. देवी भागवत पुराण : द्वितीय खण्ड : हरिश्चन्द्रोपाख्यान।
२. ,, : ,, : ,,
३. ,, : ,, : ,,

के घर राजा का भूखे प्यासे रहना, सात दिन तक ब्राह्मण द्वारा भिक्षा माँगना, सर्प बन कर मुनि का रोहित को डसना, भेड़िया बनकर काशी नरेश के पुत्र को मार कर शमशान में बैठी तारा के निकट फेंकना, ज्योतिषी बन कर काशी नरेश को राजकुमार की हत्या से सूचित करना, नग्नशरीरा तारा का राजा के सम्मुख लाया जाना, कलुआ द्वारा हरिश्चन्द्र को तारा का वध करने की आज्ञा, राजा के वध करने को उद्यत होते ही भगवान् विष्णु का प्रगट होना आदि घटनाएँ पौराणिक न होकर कवि की कल्पनाशीलता तथा मौलिकता की परिचायक हैं।

"बारामासा श्रीकृष्ण" की पौराणिक कथा भी, कवि की कल्पना द्वारा कई स्थलों पर नवीन रूप धारण कर गई है। वसुदेव जब बालक श्री कृष्ण को नन्द के यहाँ पहुँचाने के लिए जाते हैं, तो यमुना का पानी बहुत चढ़ा हुआ होता है। विष्णु पुराण में लिखा है :—

यमुना चाति गंभीरां नाना वर्त्तशताकुलम्
वसुदेवो वहन्विष्णुं जानु मात्रवहां ययौ[1] ॥ १८ ॥

अर्थात् भगवान को ले जाते हुए वसुदेव जी ने विविध प्रकार की भँवरों से परिपूर्ण यमुना जी को जिस समय पार किया, उस समय उनके घुटनों तक ही जल रह गया। यहाँ जल के कम होने का कारण यद्यपि स्पष्ट नहीं किया गया परन्तु संकेत द्वारा यह बता दिया गया है कि क्योंकि वसुदेव, भगवान् को लिये जा रहे थे, इसलिये यमुना की उत्ताल तरंगों ने मार्ग दे दिया। श्रीमद् भागवत में भी यमुना इसी प्रकार भगवान् को मार्ग दे देती है।[2] जल के उतरने का कारण देवीभागवत पुराण में इस प्रकार दिया गया है कि पानी, योगमाया के प्रभाव से उतर गया था :

योगमायाप्रभावेण ततारानक दुन्दुभि : ।
गत्वा तुं गोकुलं शोरिर्निशीथे निर्जने पथि[3] ॥ १८ ॥

परन्तु चन्दूलाल की कल्पनाशक्ति, जल के कम होने का बहुत सुन्दर कारण खोज निकालती है। उनके अनुसार चढ़ा हुआ यमुना का जल भगवान् के चरण स्पर्श के लिये व्याकुल है और भगवान् यमुना के इस आशय को भली भाँति समझते हैं। छजले में पड़े हुए श्री कृष्ण अपना पाँव छजले से बाहर निकाल लेते हैं, जिसे छू कर यमुना का जल एकदम उतर जाता है।

इसी प्रकार चन्दूलाल की कल्पना-शक्ति यह भी स्वीकार करने में अस-

---

१. विष्णु पुराण : पंचमांशः तृतीय अध्याय।
२. श्रीमद्भागवतः दशम स्कंध : तृतीय अध्याय : श्लोक-५०।
३. देवी भागवत पुराण : प्रथम खंड : श्री कृष्ण जन्म।

मर्थ है कि कंस जैसा पराक्रमी राजा, स्वयं अपने हाथों से वसुदेव-देवकी की सन्तान को धरती पर पटके। यद्यपि विष्णु पुराण कंस के हाथों से ही यह कुकृत्य करवाता है।

कंसस्तूर्णमुपेत्यैनां ततो जग्राह बालिकाम्।
मुञ्च-मुञ्चेति देवक्या सन्नकण्ठया निवारितः ॥ २५ ॥
चिक्षेप च शिलापृष्ठे सा क्षिप्ता वियति स्थिता।
श्रावपरूपं सुमहत्सायुधाष्टमहाभुजम्[१] ॥ २६ ॥

देवी भागवत पुराण,[२] श्रीमद्भागवत[३] तथा हरिवंश पुराण में भी कंस ही कन्या को धरती पर पटकता है :—

शिलापृष्ठेऽनिष्पिष्टा दिवमुत्पतत[४] ॥ ३६ ॥

परन्तु चन्दूलाल कंस के द्वारा एक धोबी को बुलवाते हैं, जो कंस के आदेश का पालन करते हुए, नवजात कन्या को लकड़ी के तख्ते पर दे मारता है।

चन्दूलाल की कल्पना शीलता को यह भी स्वीकार नहीं कि आकाश की ओर उड़ती हुई कन्या, दिव्य रूप धारण करके भी, कंस को वास्तविकता से परिचित न कराये। विष्णु पुराण में कंस को मात्र यही बताया जाता है कि— जातोयस्त्वां वधिष्यति[५], अर्थात् तेरा मारने वाला उत्पन्न हो चुका है। कौन, कहाँ उत्पन्न हो चुका है, आकाशवाणी में इसका कोई संकेत नहीं है। कृष्ण जन्म विषयक सूचना तो कंस को नारद मुनि तब देते हैं जब भगवान् व्रज की अनेक लीलाएँ पूर्ण कर चुके होते हैं।[६] श्रीमद्भागवत में भी योगमाया इतना ही बताती है कि तेरा मारने वाला शत्रु तो किसी स्थान पर उत्पन्न हो चुका है।[७] हरिवंश पुराण में यह अधूरी सूचना भी नहीं है। वहाँ आकाश की ओर प्रयाण करती हुई योगमाया केवल इतना ही कहती है कि 'पृथ्वी पर पटक कर मेरा वध

---

१. विष्णु पुराण : पंचमांश : तृतीय अध्याय।
२. 'इति संचित्य तां बलां गृहीत्वा पादयोः खलः ॥२९॥
देवी भागवत पुराण : प्रथम खण्ड : श्री कृष्ण जन्म।
३. श्रीमद्भागवत : दशम स्कंध : चतुर्थ अध्याय : श्लोक -७।
४. हरिवंश पुराण : प्रथम खंड : विष्णु पर्व।
५. विष्णु पुराण : पंचमांश : तृतीय अध्याय : श्लोक-२७।
६. 'कंसाय नारदः प्राह यथावृत्तमनुक्रमात्।
यशोदा देवकी गर्भं परिवृत्त्याद्यशेषतः ॥३॥
विष्णु पुराण : पंचमांश : पंचम अध्याय।
७. श्रीमद्भागवत : दशम स्कंध : चतुर्थ अध्यायः श्लोक-१२।

करने वाले, तेरे शत्रु तुझे इसी प्रकार धरती पर घसीट कर मारेंगे ।'

कंस कंस विनाशाय यदहं धातिता त्वयां ।
सहुसा च समुत्क्षिप्य शिलायामभिपोथिता ॥३३॥
तस्मात्तवान्तकालेऽहं कृष्यमाणस्य शत्रुणा ।
पाटयित्वा करैर्देहमुष्णं पास्यामि शोणितम्[1] ॥३४॥

कृष्ण जन्म की सूचना यहाँ भी नारद मुनि ही कंस को देते हैं ।[2]

परन्तु चन्दूलाल की कल्पनाशीलता कंस को किसी भ्रम में नहीं रखना चाहती। कवि प्रभु की सत्ता में अगाध विश्वास रखते हुए, योगमाया के द्वारा ही कंस को स्पष्ट रूप से सूचना दिलवा देते हैं कि तेरा मारने वाला गोकुल में पैदा हो चुका है।

इसके अतिरिक्त कृष्ण की बाँसुरी से निकलने वाले अनेक राग रागनियों की सूची देकर कवि ने न केवल अपने संगीत सम्बन्धी ज्ञान का परिचय ही दिया है अपितु बांसुरी से सम्बन्धित उस पद को प्रभावशाली तथा रोचक भी बना दिया है।

पात्र :

इतिवृत्तात्मकता प्रधान होने के कारण, प्रस्तुत बारामासों में अनेक पात्र हमारे सामने आते हैं। नीचे इन्हीं पात्रों का संक्षेप में परिचय दिया जाता है।

पुरुष पात्र :

बारामासा श्रीरामचन्द्र, प्रह्लाद, हरिश्चन्द्र तथा श्री कृष्ण में भगवान् **विष्णु** चतुर्भुज रूप धारण करके, शंख, गदा, चक्र, पद्म से सुसज्जित होकर प्रगट होते हैं। भक्तों की रक्षा को तत्पर तथा भक्त से प्रसन्न होकर वरदान देते हुए भगवान् विष्णु का रूप अत्यंत मोहक बन पड़ा है। बा० श्रीरामचन्द्र में, पहले तो संतान विहीन होने के कारण **दशरथ** अत्यन्त दुखी दिखाई देते हैं परन्तु फिर तपस्या द्वारा भगवान् को प्रसन्न करके, उनसे उन्हीं जैसा पुत्र प्राप्त करने का वरदान प्राप्त कर लेते हैं। ऋषि-भक्त राजा दशरथ जहाँ एक ओर विश्वामित्र की आज्ञा पर तुरन्त राम लक्ष्मण को उनका यज्ञ सम्पूर्ण करने के लिए भेजते हैं वहाँ दूसरी ओर फर्श पर पड़ी कैकेई को, अपने हाथों से उठाकर अपने पत्नी-प्रेमी कोमल हृदय का परिचय भी देते हैं। कैकई को प्रदत्त वचनों के पालन में 'प्राण जाँय पर वचन न जाई' के पालक होते हुए

१. हरिवंश पुराण : प्रथम खण्ड : विष्णु पर्व ।
२. " " " : " ।

भी, पुत्र प्रेम के वशीभूत दशरथ, कैकेई से राम को वन न भेजने की प्रार्थना करते हुए एक साधारण पिता की भांति व्यवहार करते हुए हमारे सामने आते हैं। राक्षसों का वध करते हुये, अहिल्या का उद्धार करते हुए, धनुष तोड़ कर सीता से विवाह करते हुए तथा फिर रावण को मारकर, धरती पर पड़ा पापों का बोझ कम करते हुए **राम** मर्यादा पुरुषोत्तम ही नहीं, साक्षात् भगवान् प्रतीत होते हैं।[1]

'बारामासा नेमिनाथ' में **नेमिनाथ** के दो रूप हमारे सामने आते हैं—दूल्हा रूप तथा संसार से विरक्त रूप। 'बा० मूर्ति पूजन' में दो ही पात्र हैं सुगुरु तथा कुगुरु। सुगुरु वह है जो मूर्ति पूजा का उपदेश देता है तथा धर्म सूत्रों का ठीक अर्थ बताता है। **कुगुरु** वह है, जो सूत्रों का ठीक अर्थ नहीं बताता, सूत्रों में आए मूर्ति पूजा सम्बन्धी अंशों को नज़र अंदाज़ करता है, मुख पर पट्टी बाँधता है तथा मूर्तिपूजा को हिंसा की संज्ञा देता है।

'बारामासा प्रह्लाद' में, **हिरण्यकशिपु** अत्यन्त बलवान, प्रजा को कष्ट देने वाले, प्रभु के स्थान पर अपनी भक्ति कराने वाले, अनन्त सेनाओं के स्वामी के रूप में हमारे सामने आता है। प्रह्लाद पर अनेक मुसीबतें तोड़ता हुआ यह पात्र पाठकों की घृणा का पात्र बन जाता है तथा जब उसका पेट फाड़कर नृसिंहावतार उसका प्राणान्त कर देते हैं तो पाठक, जैसे सुख का साँस लेता है। इसी बारामासा में दैत्यों के गुरु **शुक्राचार्य** प्रह्लाद के शिक्षक बन कर प्रकट होते हैं, जिनकी आसुरी विद्या का प्रह्लाद पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। हिरण्यकशिपु के क्रोध से भयभीत शुक्र प्रह्लाद को प्रभु भक्ति के मार्ग से हटाते हुए, स्वयं पाठकों की घृणा को निमन्त्रित कर लेते हैं। यहां **प्रह्लाद** ही एक मात्र ऐसा पात्र है, जो पाठक की सहानुभूति को साथ लेकर चलता है। बिल्ली के बच्चों के लिए कुम्हारिन को प्रताड़ित करता हुआ प्राद आरम्भ में ही पाठकों के मन को अपनी ओर आकृष्ट कर लेता है तथा फिर सम्पूर्ण कथा में जब भी प्रह्लाद पर कोई विपत्ति आती है तो, पाठक का मन करुणा से भर आता है। दृढ़ निश्चय वाला, रामभक्ति में अद्वितीय, यह बालक जब हिरण्यकशिपु के विनाश का कारण बनता है तो पाठकों के मन में उसके प्रति श्रद्धा का भाव उत्पन्न हुए बिना नहीं रहता।

'बारामासा हरिश्चन्द्र' में, देवता होते हुए भी **इन्द्र** का जो रूप पाठकों के सम्मुख उपस्थित हुआ है, वह उसका स्वार्थी रूप है। प्रह्लाद की भाँति ही पाठकों के मन पर अपने चरित्र की छाप अंकित करने वाला पात्र है-राजा **हरिश्चन्द्र**।

---

१. रामानुगामी लक्ष्मण, पापों का प्रतीक रावण तथा पुण्यात्मा विभीषण भी इसी बारहमासे के अन्य पात्र हैं।

अयोध्या नरेश, वचन के पक्के, शूरवीर, ब्राह्मण-भक्त, कर्त्तव्य-परायण हरिश्चन्द्र अनेक यातनाएँ झेलकर भी सत्य का दामन हाथ से नहीं जाने देते। स्वयं थके हारे होने पर भी जब वे, मार्ग में थकित रोहित को गोद में उठा कर चलते हैं तो वे एक साधारण पिता के रूप में हमारे सामने आते हैं। कलुआ के आदेश-पालन में स्वपत्नी तक से कर माँगने वाला पात्र, स्थान-स्थान पर पाठकों की आंखों को अश्रुपूर्ण करते हुए चलता है। पितृ-भक्त कोमलाँगी **रोहित** भी बहुत प्रिय पात्र प्रतीत होता है। राजभंगी **कलुआ** कर्म से नीच होकर भी पाठकों के मन में वितृष्णा का भाव जागृत नहीं करता। इसका कारण उसका कोमल हृदयी होना है।[1] इसी बारामासा के एक और महत्त्वपूर्ण पात्र हैं—ऋषि **विश्वामित्र**। 'बा० श्रीरामचन्द्र' में जो विश्वामित्र बड़े भारी तपस्वी के रूप में हमारे सामने आते हैं, वही विश्वामित्र यहाँ खलनायक बन जाते हैं। यहाँ वे किसी भी रूप में प्रकट होते हों, पाठक की उनके प्रति एक बार खोई सहानुभूति पुनः जागृत नहीं होती। वे इन्द्र की सहायता के लिए शूकर बने हों या हरिश्चन्द्र को ठगने के लिए ब्रह्मचारी, काशी की मंडी में वपुवेशधारी हों या हरिश्चन्द्र को भूखा रखने के लिए भिक्षु रूप धारी, नाग रूप धारण करके रोहित को डंक मार रहे हों या भेड़िया बन कर काशी नरेश के पुत्र को मार कर श्मशान में बैठी तारा के निकट फेंक रहे हों, पाठक उन्हें वितृष्णा की दृष्टि से ही देखता है।

'बारामासा श्रीकृष्ण' में, कृष्ण के पिता **वसुदेव** पाठकों के सत्कार के पात्र बनकर हमारे सामने आते हैं तो **कंस** घृणा का पात्र बनकर। पापी, अत्याचारी, नवजात अबोध कन्या को मरवाता हुआ तथा कृष्ण की हत्या के लिए पूतना को भेजता हुआ कंस राक्षस ही प्रतीत होता है। इस बारामासा के नायक **कृष्ण** पाठकों के श्रद्धेय ही नहीं, प्रिय भी बनते हैं। उनके चरण-स्पर्श को आकुल यमुना के साथ-साथ पाठक का मन भी अकुला उठता है। चन्दूलाल उनका सुन्दर रूप, इस प्रकार पाठकों के मन पर अंकित कर देते हैं कि पूतना, तृणावर्त, वत्सासुर, चाणूर, मुष्टक, और कुवलयापीठ जैसे दैत्यों का संहार करते हुए भी, कृष्ण बालक्रीड़ाएँ करते ही प्रतीत होते हैं।[2]

नारी पात्र :

यद्यपि इन बारामासों के नारी पात्रों में सीता, प्रह्लाद की माता, हरिण्यकशिपु की बहन, छली बालिकाएँ, वेश्या, कलुआ की पत्नी, देवकी, पूतना तथा योगमाया

---

१. माली, मन्त्री, सैनिक, छली बालक, सेठ, जगन्नाथ, हलवाई, काशी नरेश इस बारामासे के अन्य पात्र हैं।
२. प्रहरी, नन्द, बलराम तथा अक्रूर इस बारामासे के अन्य पात्र हैं।

(कन्या) आदि अनेक नारी पात्र उपलब्ध होते हैं परन्तु प्रमुखता राजुल तथा तारा को ही प्राप्त हुई है। **राजुल** जूनागढ़ की राजकुमारी है, जिससे विवाह करने के लिए नेमिनाथ बारात लेकर पहुँचते हैं और बारात के भोजन के लिए एकत्र पशुओं को देखकर संसार से विरक्त हो जाते हैं। वहीं से नेमिनाथ गिरनार पर्वत की ओर प्रस्थान कर देते हैं। सामाचार मिलते ही राजुल जाकर उनका रास्ता रोक लेती है तथा उन्हीं की अनुगामिनी होकर उनके साथ-साथ तपस्या करती है। राजुल का यह साध्वी रूप पाठक की श्रद्धा का पात्र बनता है।

दूसरी प्रमुख नारी है, राजा हरिश्चन्द्र की पत्नी **तारा**। पतिपरायणा तारा पति के सत्य की रक्षा के लिए न केवल सर्वस्व दान ही करती है बल्कि पति को दक्षिणा से उऋण करने के लिए दासी के रूप में बिकना तक भी स्वीकार करती है। विश्वामित्र जब उसे वेश्या के हाथ बेचने लगते हैं तो सूर्य भगवान् से लज्जा की रक्षा की प्रार्थना करती हुई तारा पाठकों का मन द्रवित कर देती है। तारा की अद्वितीय धर्म-दृढ़ता की चरम सीमा तब दिखाई देती है, जब वह क्षुधा पीड़ित पति की सहायता न करके, उन्हें सत्य मार्ग से विचलित होने से बचाती है। पुत्र-मरण पर साधारण गृहणी की भांति पछाड़ खाकर गिरती हुई यही तारा विश्वामित्र द्वारा प्रेषित अनेक यातनाओं को जिस धैर्य तथा साहस के साथ सहन करती है, पाठक उससे मन्त्रमुग्ध ही नहीं होते, तारा के प्रति श्रद्धा भाव से पुलकित भी हो उठते हैं।

अस्तु, हम देखते हैं कि चन्दूलाल के बारामासों के ये सभी पात्र, पुरुष हों या नारी, कवि के हाथ की कठपुतलियाँ न होकर सजीव तथा गतिमान दिखाई देते हैं। पाठक के मन पर अपने चरित्रानुकूल प्रभाव अंकित करते हुए ऐसे पात्रों के सृजन के लिए, कवि वास्तव में, प्रशंसनीय काव्य-प्रतिभा का प्रदर्शन करता है!

रस :

प्रस्तुत संग्रह की सभी रचनाएँ भक्तिपरक होने के कारण यद्यपि **शान्तरस** की वाहक हैं परन्तु इनमें मात्र शान्तरस ही सर्वत्र व्याप्त नहीं है। इन रचनाओं में अनेक स्थानों पर रस-परिवर्तन होता है, जिससे पाठक के मन में भिन्न-भिन्न रसों का उद्रेक, इन रचनाओं को अधिक सुन्दर तथा अधिक ग्राह्य बना देता है। 'बा० रामचन्द्र' में, राम के राज्याभिषेक की घोषणा करके जब राजा दशरथ प्रासाद में जाते हैं तो कैकेयी को शोकमग्न, फर्श पर गिरी हुई देखते हैं। इस स्थिति का वर्णन कवि ने जिन शब्दों में किया है, उससे पाठक के हृदय में **करुण रस** की उत्पत्ति होती है। राम के राज्याभिषेक के निर्णय से आनन्दित

दशरथ देखते हैं कि प्रासाद शून्य समाधि की तरह मौन हैं, शोकाकुल कैकेयी धरती पर लेटी हुई है। दशरथ स्वयं उसे अपने हाथों से उठा कर, जब शोक का कारण पूछते हैं तो वह प्रथम वर द्वारा भरत के लिए राज्य तथा दूसरे वर द्वारा राम के लिए बनवास माँगती है। तब पाठक का हृदय करुणा से भर आता है। इसी प्रकार बारहमासा प्रह्लाद में, जब शुक्राचार्य उनके द्वारा दी गई आसुरी विद्या के स्थान पर प्रह्लाद के मुख से रामनाम सुनते हैं तो वे भड़क उठते हैं। क्रुद्ध गुरु बालक प्रह्लाद पर बैंतों की वर्षा करते हैं तो पाठक के हृदय में करुणरस की उत्पत्ति होती है। जल्लादों द्वारा प्रह्लाद को फाँसी देने के यत्न तथा हिरण्यकशिपु की बहन द्वारा प्रह्लाद को अग्नि में जलाने की चेष्टा वाले स्थल भी करुण रस की ही उत्पत्ति करते हैं। बालक प्रह्लाद जब खेलते खेलते कुम्हारिन के घर पहुँचते हैं और वहाँ आवें के पास, बिल्ली को उदास बैठे देख कर कुम्हारिन से बिल्ली की उदासी का कारण बालक सुलभ उत्सुकता से पूछते हैं तो **वात्सल्य रस** की उत्पत्ति होती है। कुम्हारिन को पापिन कह कर बिल्ली के बच्चों के लिए प्रह्लाद की प्रताड़ना भी वात्सल्य रस की उत्पादक है। प्रह्लाद को दी जा रही फाँसी का तीन बार टूटना, पर्वत से गिराने पर भी प्रह्लाद के चोट तक न लगना, अग्नि में भी प्रह्लाद का न जलना तथा तप्त थंभ को अंक भरते ही उसका जल समान शीतल हो जाना **अद्भुत रस** की सृष्टि करता है तथा जब नृसिंह भगवान् हरिण्यकशिपु अपनी जांघों पर रख कर अपने नाखुनों द्वारा उसका पेट फाड़ कर, उसकी अंतड़ियाँ बाहर निकाल लेते हैं, तो **वीभत्स रस** की उत्पत्ति होती है।

'बा० हरिश्चन्द्र' की कथा के वर्णन में भी '**करुण रस**' का प्रभुत्व है परन्तु यहाँ भी अन्य रसों की अनुभूति होती है। दान का संकल्प करके वन से लौट रहे हरिश्चन्द्र को जब मार्ग में रोहित मिलता है और हरिश्चन्द्र की व्यथा जानकर जब वह अपनी मां को स्थिति से अवगत कराता है तो पाठक का हृदय करुण रस से भर आता है। इसी करुण रस का अतिरेक उस समय अनुभव होता है जब राजपाट त्याग कर हरिश्चन्द्र पत्नी तथा रोहित को लेकर दासत्व स्वीकार करने के लिए काशी की ओर प्रयाण करते हैं तो थकित शरीरा रानी रोहित की थकन से व्याकुल होकर राजा से किसी सवारी का प्रबंध करने के लिए कहती है तो राजा स्वयं थकित होने पर भी रोहित को उठा कर चलने लगते हैं। बिकने के लिए काशी के चौराहे में बैठे राजा, रानी तथा रोहित का वर्णन भी करुण रस की उत्पत्ति करता है। उस समय तो करुण रस अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच जाता है जब एक वेश्या रानी को क्रय करने लगती है तथा रानी अपने धर्म की रक्षा में पहले विश्वामित्र से तथा फिर सूर्य भगवान् से प्रार्थना करती हैं। इसी करुण रस की पराकाष्ठा का एक अन्य स्थल है रोहित की

मृत्यु पर रानी का प्रारब्ध की निन्दा करते हुए विलाप करना। मरघट में पहरा दे रहे हरिश्चन्द्र जब पुत्र की चिता को अग्नि देने लगी रानी से कर माँगते हैं तो **भयानक रस** उत्पन्न होता है। तथा जब भेड़िये का रूप धारण करके विश्वामित्र काशी-नरेश के पुत्र की गर्दन तोड़ कर उसकी लाश नग्न शरीरा, मरघट में बैठी रानी के पास फेंकते हैं, तो **वीभत्स रस** की सृष्टि होती है। इसी कथा के प्रारम्भ में **वीर रस** के दर्शन भी होते हैं, जब शूकर द्वारा उजाड़े जा रहे बाग की रक्षा में अश्वारोही हरिश्चन्द्र स्वयं खड्ग लेकर, अपनी सेना को शूकर को घेरने का आदेश देते हैं। शूकर द्वारा बाग उजाड़ने का वर्णन **अद्भुत** रस की सृष्टि करता है।

इसी प्रकार 'बा० श्री कृष्ण' में तख्ते से पटकी हुई कन्या का चतुर्भुज रूप धारण करके आकाश की ओर उड़ना तथा कृष्ण का विषाक्त स्तन के माध्यम से पूतना के प्राण खींचना भी अद्भुत रस की सृष्टि करता है। बाँसुरी की धुन पर मोहित गोपियों का वर्णन **शृंगार रस** का द्योतक है तथा कंस द्वारा कन्या को तख्ते पर पटकने का आदेश करुण रस का।

संक्षेप में, हम देखते हैं कि ये बारामासे शान्त रस प्रधान होकर भी करुण, वात्सल्य, भयानक, अद्भुत, वीभत्स, वीर, शृंगार आदि अन्य विविध रसों से भी सुसज्जित हैं। रसों की यह विविधता इन रचनाओं को अधिक ग्राह्य तथा अधिक प्रभावशाली बना देती है।

अलंकार :

चन्दूलाल की कविता जहाँ एक ओर सरिता की भाँति प्रवाहमान होती है, वहाँ दूसरी ओर अनेक अलंकारों से सुसज्जित होकर शास्त्रीय अपेक्षाएँ भी पूर्ण करती है। प्रत्येक महीने का नाम देकर जब कवि उसके आरम्भिक अक्षर से ही अगला शब्द आरम्भ करता है तो **छेकानुप्रास** ही प्रस्तुत नहीं करता अपितु इन रचनाओं के बारामासा होने का औचित्य भी स्थापित करता है। प्रस्तुत बारामासों में कवित्त, बैत तथा ड्योढ़ी बैत **अनुप्रास** के सुन्दर उदाहरण हैं। इस शब्दालंकार के अतिरिक्त अनेक अर्थालंकार भी इन रचनाओं में उपलब्ध होते हैं। **उपमा** का प्रयोग कवि ने प्रचुर मात्रा में किया है। उदाहरणार्थ, अयोध्या को देवसदन से, महलों को शून्य समाधि से (बा० श्री रामचन्द्र) राजुल के तड़पने को मछली के तड़पने से (बा० नेमिनाथ) तथा गणेश के ध्यान को दिनकर से और अज्ञान को तम से (बा० प्रह्लाद) उपमा दी गई है। बा० नेमिनाथ के पाँचवें पद में अतिशयोक्ति पूर्ण **उत्प्रेक्षा** के दर्शन होते हैं तथा बारामासा ज्ञानोपदेश के पाँचवे पद में **सांगरूपक** के। राजुल की साथ चलने की प्रार्थना में कवि 'दुष्कर मोह की नदिया' के **रूपक** का आयोजन करता है

तथा समुद्र की भयंकर तरंगों एवं उसमें उठ रही मोह-उर्मियों के रूपक द्वारा कवि संसार की विशालता एवं मोह बंधनों का वर्णन करता है। मुखपट्टी वाले साधुओं को देखकर कूकर, खर, एवं कपियों के भयभीत होकर भागने में (बा० मूर्ति पूजन) तथा तारा के विलाप से पृथ्वी तथा पृथ्वी के वाहक शेषनाग के कंपायमान होने में **अतिशयोक्ति** के दर्शन होते हैं। तप्त खम्भ के जल समान शीतल होने में **विरोधाभास** अलंकार उपस्थित होता है।

छन्द :

प्रस्तुत संग्रह की रचनाओं में छन्दों के विविधता के दर्शन भी होते हैं। बारामासा श्रीरामचन्द्र[1], बारामासा मूर्तिपूजन तथा बारामासा ज्ञानोपदेश की रचना **ताटंक** छन्द में हुई है। इनकी प्रत्येक पंक्ति में तीस मात्राएँ हैं और सोलह, चौदह मात्राओं पर यति है। बारामासा नेमिनाथ की रचना **रोला** छन्द में हुई है। इसमें चौबीस कलाएँ है तथा शिव और तेरह पर यति की व्यवस्था है। बारामासा हितोपदेश की रचना **कवित्त** छन्द में की गई है। बारामासा प्रह्लाद में तीन प्रकार के छन्दों का प्रयोग हुआ है—**ड्योढी बैत, दोहा, कवित्त।** पूरा बारामासा इन्हीं तीन छन्दों की आवृत्तियों पर आधारित है। इसी प्रकार बारामासा हरिश्चन्द्र में भी एकाधिक छन्दों की योजना उपलब्ध होती है। इस बारामासा की रचना में छन्द, **कुन्डली तथा कवित्त** की सुनिश्चित आवृत्तियाँ रखी गई हैं। कवित्त का षट्पदीय रूप तथा बैत का ड्योढ़ा रूप चन्दूलाल की मौलिकता का परिचायक है।

भाषा :

प्रस्तुत बारामासों की भाषा खड़ी बोली हिन्दी है। सं० १६३६-५४ वि० में रचित काव्य में, जबकि हिन्दी कविता के लिए खड़ी बोली को असमर्थ तथा ब्रजभाषा को समर्थ समझा जाता था, इस प्रकार की भाषा का प्रयोग बहुत ही श्लाघ्य है। इन रचनाओं में संस्कृत के तत्सम तथा तद्भव दोनों प्रकार के शब्दों का बाहुल्य उपलब्ध होता है। एक ओर जहाँ यज्ञ, सम्पूर्ण, मुक्ति, भूप, शून्य-समाधि, मृदंग, दुष्कर, स्वकृत, प्रतिमा, तूर्ण, द्रव्य इत्यादि तत्सम शब्दों के दर्शन होते हैं, वहाँ दूसरी ओर सीख, संगल, कारज, पौन, छिन, घड़ा आदि अनेकानेक तद्भव शब्द भी दिखाई देते हैं। इन रचनाओं की एक विशेषता यह भी है कि चन्दूलाल ने कुछ शब्दों का 'तत्सम-तद्भव-मिश्रित' रूप भी प्रस्तुत किया है। पुष्पवर्षा के लिए 'फूलवर्षा' तथा 'सुमन झड़ी', गजारोहण के लिए

१. बारामासा श्रीरामचन्द्र का अन्तिम पद कवित्त छन्द में है।

'गज अस्वारी', मोक्ष चिन्ह के लिए 'मोक्ष निशानी' और सप्तद्वीप के लिए 'सात द्वीप' का प्रयोग इसके सुन्दर उदाहरण हैं।

पंजाबी भाषी होने के कारण चन्दूलाल की ये रचनाएँ पंजाबी भाषा के प्रभाव से मुक्त नहीं हो सकी हैं। महीनों के नाम चैत्र, बैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़ न होकर पंजाबी प्रभाव से ही चेत, बसाख, जेठ, हाढ़ बन गये हैं। क्रिया के प्रयोग में भी किया, लिया, पिया आदि के लिए कीता, लीता, पीता आदि का प्रयोग पंजाबीयत का ही उदाहरण है। माँगता तथा लजाता आदि के लिए मंगना तथा संगदा आदि का प्रयोग भी इसी कोटि में आता है। 'उठाना' के लिए 'चुक्या' तो ठेठ पंजाबी ही है। पैंड़ा, वांग, बाझ, ताईं, विच, जे, ते, आदि पंजाबी शब्दों के प्रचुर प्रयोग के साथ साथ अनेक स्थानों पर शब्द संकोच के लिए भी, पंजाबी भाषा के व्याकरण का सहारा लेते हुए, कवि ने 'में' के स्थान पर शब्द को ही अनुस्वारात्मक ईकारान्त कर दिया है। 'यथा-चरणों' में के लिए 'चरणीं' तथा 'नयनों में' के लिए 'नैनीं' आदि।

पंजाबी के अतिरिक्त बाँगरू तथा राजस्थानी भाषाओं का प्रभाव भी इन पर दिखाई देता है। थारे, अगारी, ल्याय, सूँ, डोल्यो, तुमरा, हमरा आदि शब्दों का प्रयोग तथा 'न' के लिए 'ण' का प्रयोग इसी कोटि के उदाहरण हैं। इसके साथ ही होश, दुनिया, अजब, तमाशा, जहान, नज़र, रैय्यत, मशहूर, खुशी, बेशुमार, साबुत, फ़र्ज़न्द, शताब, किताब, जवाब, सखुन, ज़ेर, दहशत, फर्याद आदि अनेकानेक उर्दू-फारसी शब्दों का प्रयोग भी इन रचनाओं में हुआ है। 'हुआ' के लिए 'भयो' जाना के लिए 'जान्यो' 'नहीं' के लिए 'नाहीं' तथा नाहिं 'जितने' के लिए 'जेते' आदि का प्रयोग प्रस्तुत रचनाओं पर व्रजभाषा के प्रभाव को स्पष्ट करता है। व्रजभाषा के प्राभावाधीन ही कवि ने बहुवचन बनाने में 'ओं' के स्थान पर 'न' का प्रयोग 'किया है। जैसे—पशुओं के स्थान पर पशुअन, नयनों के स्थान पर नैनन आदि।

'मुहावरा' को भाषा का प्राण कहा जाता है। कविता में चमत्कार लाने के लिए प्रायः सभी कवियों ने मुहावरों का भरसक प्रयोग किया है। प्रस्तुत रचनाएँ भी इस उक्ति का अपवाद नहीं है। हिन्दी मुहावरों के साथ साथ चन्दूलाल के यहां जुल्म कमाना, जुल्म गुजारना, ज़र्दी छाना, पेश न जाना, मुश्कें बाँधना, हाथ समाना आदि उर्दू मुहावरों के अतिरिक्त माथा टेकना, टहल करना, रौला पड़ना, कारा करना, दाइए बाँधना, आदि पंजाबी मुहावरों का प्रयोग भी द्रष्टव्य है।

दार्शनिकता :

यद्यपि इन बारामासों में दार्शनिकता का गांभीर्य दिखाई नहीं देता परन्तु

कथाओं के शिक्षाप्रद होने के कारण दार्शनिकता की झलक अवश्य दिखाई पड़ती है। कवि ने इन बारामासों की रचना उद्देश्य विशेष से की है। यद्यपि तुलसी के 'स्वान्तः सुखाय', की भांति चन्दूलाल भी 'आनन्दी बारामास बनाया' कह कर इनकी रचना का उद्देश्य आत्मसुख प्राप्ति ही बताते हैं, परन्तु इनकी रचना के पीछे एक और उद्देश्य भी निहित है। वह है, जीवन के संस्कार परक मूल्यों का प्रस्थापन। दूसरे शब्दों में हम इस प्रकार भी कह सकते हैं कि कवि ने पौराणिक कथाओं के माध्यम से, पाठकों को हिन्दू संस्कृति के उत्तम गुण ग्रहण करने की प्रेरणा दी है। तत्कालीन समाज में धर्मान्धविश्वास की प्रवृत्ति के कारण ही कवि पाठकों को बैकुण्ठ प्राप्ति का लालच देकर बारामासा पढ़ने-सुनने की ओर प्रवृत्त करता है।

'बा० श्री रामचन्द्र' में कवि निराश व्यक्तियों को प्रभुभक्ति का आश्रय लेने की शिक्षा देता है। सन्तान विहीन निराश दशरथ विष्णु की भक्ति द्वारा ही पुत्र-रत्न प्राप्त करते हैं। राम को एक आदर्श मानव के रूप में प्रस्तुत करके कवि हमें माता-पिता के प्रति कर्त्तव्य परायण होने का उपदेश देता है। धरती पर बढ़े हुए पापों के भार को कम करने के लिये जिस प्रकार राम ने राक्षसों का नाश किया तथा सन्तों की रक्षा की, राक्षस वध करके विश्वामित्र का यज्ञ सम्पूर्ण कराया, रावण को मार कर विभीषण द्वारा धर्म का राज्य स्थापित किया, उसी प्रकार यह बारामासा साधारण मनुष्यों को पापों से विमुख होकर पुण्यों की ओर अग्रसर होने की प्रेरणा देता है। 'बा० नेमिनाथ' "अहिंसा परमोधर्मः" के सिद्धान्त का प्रतिपादन करता है। तीर्थंकर नेमिनाथ बारातियों के भक्षणार्थ मारे जाने वाले जीवों का समूह देखते हैं तो उनका मन संसार से विरक्त हो जाता है। संसार की असारता उन पर स्पष्ट हो जाती है तथा वे तपस्या द्वारा सिद्धि प्राप्त करने के लिए वहीं से गिरनार पर्वत की ओर प्रयाण कर देते हैं। राजकुमारी राजुल भी उसी मार्ग की पथिक बनकर उनका अनुसरण करती हैं तथा मोक्ष प्राप्त करती हैं। नेमिनाथ की इस कथा के माध्यम से कवि हम पर संसार की असारता, क्षण भंगुरता एवं स्वार्थ परकता स्पष्ट करके, हमारा ध्यान हमारे स्रष्टा, जगत् नियन्ता प्रभु की ओर आकृष्ट करता है। 'बारामासा मूर्ति पूजन' में निहित दर्शन एक सम्प्रदाय का दर्शन है। जैन धर्म में स्थानकवासी तथा मूर्तिपूजक दो प्रमुख सम्प्रदाय हैं। पंजाब में जब मुनि श्री विजयानन्द सूरी ने स्थानकवासी जीवन का परित्याग करके, स्थान स्थान पर जैन मन्दिरों का निर्माण करवा कर जिन प्रतिमाएँ स्थापित कीं तो स्थानक वासी साधुओं तथा पूज्यों ने उनका कड़ा विरोध किया। प्रत्युत्तर में मूर्तिपूजकों ने स्थानकवासी साधुओं की कटु आलोचना की। प्रस्तुत बारामासा में मूर्तिपूजक सम्प्रदाय की भावनाओं को ही अभिव्यक्ति मिली है। कवि के

अनुसार जैन धर्म-ग्रन्थ, मूर्ति पूजा का विरोध नहीं करते अपितु मूर्ति पूजा का आदेश देते हैं। अपनी इस मान्यता के प्रस्थापन में कवि स्थानांग सूत्र, सुयग-डांग सूत्र, उवावई, रायप्रसेनी, आवश्यक आदि सूत्रों, अंगों, उपांगों एवं मूल ग्रंथों का हवाला भी देता है। 'बारामासा प्रह्लाद' में सृष्टि के समस्त जीवों पर ईश्वर की प्रभुता को स्थापित किया गया है। राज्य अथवा धनधान्य से मदान्ध होकर यदि कोई व्यक्ति स्वयं को ही सर्वोच्च मानने लगे तो उसका अहंकार ही उसके विनाश का कारण बनता है। प्रभुभक्ति द्वारा, मनुष्य संसार में प्रतिक्षण प्रज्वलित मोह तथा अहंकार की अग्नि से उसी प्रकार सुरक्षित रह सकता है, जिस प्रकार प्रभु भक्तिन कुम्हारिन के दग्ध आवें में बिल्ली के बच्चे सुरक्षित रहते हैं। 'जाको राखे साइयां मार सके ना कोय' को सिद्ध करता हुआ यह बारामासा नृसिंह अवतार द्वारा अहंकार के वशीभूत हरिण्य-कशिपु के विनाश की कथा का वाहक बनकर, पाठकों को न केवल प्रभुभक्ति की ओर ही प्रवृत्त करता है अपितु ईश्वरीय सहायता में उनका विश्वास भी दृढ़ करता है।

'बा० हरिश्चन्द्र' सत्यवादी हरिश्चन्द्र की दानवीरता की कहानी द्वारा मनुष्य की संचय प्रवृत्ति पर प्रहार करता है। कवि मनुष्य को, अप्रत्यक्ष रूप से दान धर्म की ओर प्रवृत्त होने की प्रेरणा भी देता है। इस कथा में निहित दर्शन है कर्त्तव्यपरायणता का तथा अपने धर्म पर दृढ़ रहने का। हरिश्चन्द्र का धर्म है दान तथा वचन-पालन। वे इसी धर्म के रक्षार्थ घरबार, राजपाट, धन वैभव सभी कुछ दान कर देते हैं। तब तक अन्न जल ग्रहण नहीं करते जब तक दक्षिणा देकर ऋण मुक्त नहीं हो जाते। ऋण मुक्त होकर भी क्षुधा पीड़ित हरिश्चन्द्र सात दिनों तक अपने खाने की समस्त सामग्री भिक्षा में देते रहते हैं। उन जैसी ही धर्म दृढ़ता है, उनकी पत्नी तारा में। थकित हरिश्चन्द्र जब उससे पानी का घड़ा उठवा देने के लिए कहते हैं, तो वह पति परायणा होते हुए भी, सत्य से विचलित नहीं होती। वह पति के सत्य की रक्षा हेतु पति की तनिक सी सहायता करने से भी स्वयं को रोक लेती है। 'सत्यमेव जयते' का प्रतिपादन करता हुआ यह बारामासा, मनुष्य को प्रसन्न-वदन होकर, सभी विपत्तियों का सामना करने की प्रेरणा देता है। 'बा० हितोपदेश' संसार की असारता का प्रतिपादन करता है। 'बा० श्री कृष्ण' 'यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानि-र्भवति भारत, अभ्युत्थानं धर्मस्य तदात्मानां सृजाम्यहम्' के अनुरूप साधुओं के परित्राणार्थ तथा दुष्कृतों के विनाशार्थ भगवान् के अवतरित होने की कथा के माध्यम से मनुष्य को पाप तथा अहंकार से परे रहने की प्रेरणा देता है। 'बा० ज्ञानोपदेश' कर्मफल के सिद्धान्त को प्रतिपादित करके, जीवन के आध्या-त्मिक मूल्यों की ओर संकेत करता है और प्रभु भक्ति की ओर हमारा ध्यान

आकृष्ट करता है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि, ये बारामासे मानव जीवन को एक सुनिश्चित दिशा प्रदान करते हैं। मनुष्य को संसार के भ्रमजाल में उलझने से रोकते हैं तथा उसे उत्तम गुणों से आत्मसात् करने की प्रेरणा देते हैं। प्रभु की सत्ता तथा विद्यमानता में हमारे विश्वास को दृढ़ करते हैं और हमें स्रष्टा के प्रति कृतज्ञ रहने की शिक्षा देते हैं।

स्व-परिचय :

प्रस्तुत बारामासों के आरम्भ तथा अन्त में कवि ने अपना संक्षिप्त-सा परिचय भी दिया है। इसके आधार पर कवि का नाम चन्दूलाल, उपनाम 'शशि', जाति ब्राह्मण, गोत्र कौशल, निवास स्थान मालेरकोटला, जन्म १२ चन्द्र-मास सं० १६१६ वि० प्राप्त होता है। 'बा० श्री रामचन्द्र' के प्रारम्भ में कवि अपने काव्य गुरु का नाम गणपति बताता है।[1] प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ, पंचम तथा सप्तम बारामासा के अन्तिम पदों को देखने से यह भी विदित होता है कि पण्डित चन्दूलाल मालेरकोटला (पंजाब) के रहने वाले थे। 'बा० प्रह्लाद' से स्पष्ट होता है कि वे मालेरकोटला के चौक[2] में, पीपल के पास एक दुकान में बैठा करते थे। बारामासों के अन्त में बारबार 'गाया' शब्द के प्रयोग से यह भी विदित होता है कि चन्दूलाल अपनी रचनाओं के गायन द्वारा भी श्रोताओं को आनन्दित किया करते थे।[3]

रचना-काल :

प्रस्तुत बारमासों में पाँच बारामासे ऐसे हैं, जिनके रचनाकाल का पता निश्चित रूप से चलता है। अन्य तीन बारामासों के विषय में निश्चयात्मक रूप से तो नहीं, हाँ अनुमानतः कहा जा सकता है कि इनकी रचना भी सं० १६३६-१६५४ वि० में हुई होगी। अधिक से अधिक इनके रचनाकाल को खींचकर १६७५ वि० तक लाया जा सकता हैं, क्योंकि ज्येष्ठ १६७६ वि० में

---

१. गणपति मालेरकोटला के निकट 'मानवी' नामक गांव के रहने वाले थे।
२. चौक सदर। अब इस चौक में पीपल का वृक्ष नहीं है। जिसे आजकल पीपल वाला चौक कहते हैं, वह मोती बाज़ार का चौक है। मोती बाजार सन् १६०० के आस-पास निर्मित हुआ है। बारामासा प्रह्लाद की रचना के समय, कोटला तथा मालेर, दो भिन्न नगरों के बीच का वह स्थान जहाँ अब मोती बाजार है, कब्रस्तान हुआ करता था।
३. इस नगर के बड़े बूढ़ों ने भी इस तथ्य की पुष्टि की है।

पं० चन्दूलाल का देहावसान हो गया था ।

बारामासा रामचन्द्र की रचना चैत्र, कृष्णपक्ष, तृतीय सोमवार, सं०१९३६ वि० को सम्पन्न हुई । स्वयं कवि लिखते हैं :

संवत उन्नीस पर तीन षट सोच धर,
चेत बदि तीज संग जान शशिवार जी ।

बा० नेमिनाथ की रचना तिथि भाद्रपद, शुक्ल पक्ष, द्वितीया, शुक्रवार, सं० १९४१ वि० है । इस बारामासा में कवि लिखते हैं :

......फूली भादों द्वितीया शुक्र जो आया ।
इन्दु वेद ग्रह शशि सुहाना साल सुहाया ॥

इन्दु (१), वेद (४), ग्रह (९) शशि (१), साल, अर्थात् १९४१ (अंकानाम् वामतो गति) इसका रचना काल है ।

बा० मूर्ति पूजन की रचना श्रावण, कृष्ण पक्ष, द्वितीय, रविवार सं० १९४३ को सम्पन्न हुई । क्योंकि :

राम[३] वेद[४] ग्रह[९] शशि[१] साल में सौण दूज रवि जानी है ।

बा० प्रह्लाद की रचना :

संवत् उन्नीसौ तैंतासी अस्सू मास उजियाली,
तिथ तेरस निराली रविवार शुभ जानिए ।

अर्थात् आश्विन, शुक्ल पक्ष, त्रयोदश, रविवार, सं० १९४३ वि० के दिन सम्पन्न हुई । और बा० हरिश्चन्द्र की रचना तिथि है :

शुभ साल विक्रम, एक[१] नव[९] पुनि पाँच[५] पर धर चार[४] को ।
बदि माघ निस पूरन कियो तिथ तीज शुभ शशिवार को ।

अर्थात् माघ, कृष्ण पक्ष, तृतीया, सोमवार, सं० १९५४ विक्रमी ।

बारामासा श्री रामचंद्र

चेतर चित में आई हमारे श्री रघुवर गुण गाएँ जी ।
पहले सिमरूँ गुरु गणपति[1] को जिससे सब फल पाएँ जी ।
नगर अयोध्या देव सदन[2] सम जिसके भूप बताएँ जी ।
'चन्दूलाल' अज सुत[3] रघुवंशी दशरथ नाम सुनाएँ जी ।।

वसाख विष्णु का ध्यान लगा कर तप दशरथ ने कीता[4] है ।
काम क्रोध मद लोभ हकारा[5] इन पाँचों को जीता है ।
हो आनन्द हरि दर्शन दीना अमर प्याला पीता[6] है ।
'चन्दूलाल' तब नारायण से मनवांछित फल लीता[7] है ।।

जेठ जोड़ दोऊ हाथ हरी से तब दशरथ वर मंगदा[8] है ।
तुम जैसा मेरे बालक होवे कहते मूल न संगदा[9] है ।
राज कर्म में तत्पर होवे घनी होवे जो जंगदा है[10] ।
'चन्दूलाल' हरि कहा तथास्तु अन्त न उसके रंगदा[11] है ।।

---

१. चन्दूलाल के काव्य-गुरु 'गणपति' । २. देवलोक-स्वर्ग ।
३. राजा अज के वंशधर । ४. 'किया' का पंजाबी रूप ।
५. अहंकार ।
६. 'पिया' (पीने का भूत) का पंजाबी रूप ।
७. 'लिया' का पं० रू० । ८. 'माँगता' का पं० रू० ।
९. शर्माता नहीं है, संकोच नहीं करता है ।
१०. युद्ध का धनी, शूरवीर योद्धा । ११. रंग का, लीला का ।

हाढ़ हरी तब वर दे करके फिर निज भवन सिधावे जी ।
अपने सा कोई नज़र न आवे दसो दिशा फिर आवे[१] जी ।
आप वहाँ चल जन्म धारिए वर्ना वचन झुठलावे जी ।
घर दशरथ के जन्म लिया हरि 'चन्दूलाल' गुण गावे जी ।।

सावन सदके योग माया के नारायण ने हुक्म दिया ।
राजा जनक घर जन्म लओ तुम नाम रखावो अपना सिया ।
दुष्टों कारण[२] राजा जनक घर योग माया ने जन्म लिया ।
'चन्दूलाल' तब सुन शंभू[३] ने सारंग-धनुष[४] धराय दिया ।।

भादों भीड़ पड़ी कौशिक[५] पर तब दशरथ घर आया जी ।
आ आशीश दई राजा को आसन पर बिठलाया[६] जी ।
कहो मुनी जी कैसे आए दशरथ वचन सुनाया जी ।
'चन्दूलाल' दोऊ बालक दीजे यज्ञ मैं आज रचाया जी ।।

असू ऐसे कह दशरथ को राम लषन ले आया है ।
धनुष वाण तिनके कर सोहें यज्ञ मुनीष रचाया है ।
राक्षस आए रुधिर वर्षा में रघुवर धनुष उठाया है ।
'चन्दूलाल' सब राक्षस मारे पूरन यज्ञ कराया है ।।

कत्तक करके यज्ञ संपूर्ण जनक पुरी को धाए जी ।
आगे पड़ी थी गौतम नारी उसके श्राप मिटाए जी ।
गौतम नार की मुक्ति करके वेगि जनकपुर आए जी ।
'चन्दूलाल' वहाँ राजा जनक ने भूप अनेक बुलाए जी ।।

---

१. फिर आना, घूम आना ।
२. दुष्टों के विनाश के हेतु ।
३. भगवान् शिव ।
४. शिव का धनुष ।
५. ऋषि विश्वामित्र ।
६. बैठाया ।

मग्घर मन में सोच जनक तब सभा में धनुष टिकावे जी।
जो कोई तोड़े शंभू-धनुष को सोई सिया परनावे जी।
देश देश के चुक[1] रहे राजा चुक्या[2] मूल न जावे[3] जी।
'चन्दूलाल' तब तोड़ धनुष प्रभु सीता को परनावे जी ॥

पोह पहुँचे तब अवधपुरी में दशरथ गुरु बुलाया जी।
रामचन्द्र को राजतिलक दूं यही मेरे मन भाया जी।
ताल मृदंग लगे जब बजने तब कैकेयी सुन पाया जी।
'चन्दूलाल' कैकेयी रानी ने राज में विघ्न कराया जी ॥

माघ मौज से दशरथ राजा निज महलों में आवे जी।
शून्य समाधि पड़े सब मन्दिर लख दशरथ भय खावे[4] जी।
आगे ज़मीं[5] पर पड़ी कैकेयी दशरथ आप उठावे[6] जी।
भरत राज बनवास राम को कैकेयी वचन सुनावे[7] जी ॥

फागुण फर फर रोए राजा माँग न ऐसा वर प्यारी।
देऊँ भरत को राज राम सिर बनोवास[8] मत धर नारी।
नहिं मानी तब बरबस दशरथ चिठ्ठी ला दई[9] दरकारी[10]।
'चन्दूलाल कवि' देख पत्रिका बनोवास गए अवतारी ॥

लौंद लषन सिया सहित राम गए नृप[11] परलोक सिधाए[12] जी।
रावण मार सुखी की पृथ्वी लंक विभीषण पाए जी।
चौदह वर्ष रहे बन अन्दर लंक जीत घर आए जी।
'चन्दूलाल' हुई सुमन झड़ी[13] सब सुर नर मुनि हर्षाए जी ॥

---

१. उठा रहे। २. उठाया।
३. तनिक भी किसी से उठाया नहीं जाता है।
४. खाये। ५. धरती। ६. उठाये।
७. सुनाए। ८. बनवास का पं० रू०।
९. राम के नाम आदेश लिख कर भेज दिया।
१०. अपेक्षित, जो कैकेयी को अपेक्षित था। ११. राजा दशरथ।
१२. सिधारे। १३. पुष्प-वर्षा।

लंक जीत राम सिया लषन समेत आए अवध निवासी खुशी भए नर नार जी ।
धर्म का राज किए सन्तन के काज तीन लोक नव खण्ड सब बोलते जैकार जी ।
सम्वत् उन्नीस पर तीन षट सोच धर चेत वदी तीज संग जान शशिवार जी[1] ।
'चन्दूलाल' द्विज जानो कोटलामलेर वास दशरथ सुत गुण किया है उचार जी[2] ।

१. विक्रमी संवत् १९३६, तृतीया, चैत्र, कृष्ण पक्ष, सोमवार ।
२. प्रत्येक पद के आरम्भ में आया प्रथम शब्द, क्रमानुसार इन महीनों के नामों का पं० रू० चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ, श्रावण, भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष, पौष, माघ, फाल्गुन, मलमास ।

बारामासा नेमिनाथ

चढ़या चेत महीना नेमि व्याहुन आए।
जाके संग बराती यादव खूब सुहाए।
हस्ती सुतर तुरंगी गल[1] में भूषण पाए।
छाई रेणु गगन में महिमा कही न जाए॥

आई रुत वैसाखी जूनागढ़ में आवन।
शोरण रथ में विराजे नेमि खूब सुहावन।
कानीं[2] अद्भुत कुण्डल कर में कंकण पावन।[3]
प्रभु की देख छवी को सुरनर मुनि हर्षावन॥

जेठी युक्त बतावन दीजो प्रभु को उतारा।
नाहीं खबर किसी को कीजे क्या कर्तारा।
प्रभु के हो रथ आगे पशुवन करी पुकारा।
स्वामी सब जीवों के तुम तो हो रखवारा॥

१. गले में। २. कानों में। ३. पहना हुआ है।

आया हाढ़ महीना पशुवन के सुन बैनां।
चित्त उदासी भयो नीर भर आयो नैनां।
रथ से उतरे जल्दी त्यागे सब ही गहनां।[१]
'चन्दूलाल' पछानयो मिथ्या जगत का रहनां॥

सावन सुनया[२] राजुल पिया छोड़ के चलया[३]।
तड़पे वाँग[४] मछरिया राजुल सीना जलया[५]।
नैनीं नीर वरस्से मानो मेघ उछलया।
जाकर साठ सखी संग राजुल पैंडा मलया[६]॥

भादों भरम मिटाओ पूछे हो के अधीना।
क्यों मुझ छोड़ के चाले औगुण कोई न कीना।
स्वामी विना तिहारे मेरा निश्फल जीना।
जैसे मीन निमाणी[७] तड़पे जल से हीना॥

असू आसा छोड़ो जाओ घर को प्यारी।
त्यागा जगत असार श्री जिन भगती धारी।
हैं सब स्वारथ साथ क्याय सुत बाँधव नारी।
भक्ति श्री जिन केरी भव से तारन हारी॥

कत्तक किरपा कीजे मोहे संग लिजावो[८]।
मोहे जान के दासी मन के भरम मिटावो।
दुष्कर मोह की नदिया इससे पार लखावो।[९]
'चन्दूलाल' एकान्तर दोऊ जिन गुण गावो॥

---

१. गहने, आभूषण। २. सुना। ३. चला है।
४. जैसे, की तरह। ५. जला, जल गया। ६. रास्ता रोक लिया।
७. बेचारी। ८. ले जाओ। ९. लँघाओ, उतारो।

मग्घर मन में जान्यो यह जग रैन का सपना ।
हैं सब स्वारथ साथी दीसे[1] कोई न अपना ।
चालो संग हमारे जो भवसागर तरना ।
निस दिन ध्यान लगाके जिन गुण हित से जपना ।

पोह त्यागे पाँचों[2] गिरवर[3] करी त्यारी ।
आगे नेमि जिनेश्वर पीछे राजुल नारी ।
मोड़ें राजुल ताईं[4] नर और नारी सारी ।
राजुल एक न मानी श्रीजिन भगती धारी ॥

चढ़या माघ महीना दोऊ गिरवर आए ।
कीन्ही कठिन तपस्या दृढ़ कर ध्यान लगाए ।
राजुल नेमि जिनेश्वर दोउ मोक्ष को धाए ।
मिल कर चौंसठ इन्दर जयजयकार बुलाए ॥

फागुन फूली भादों द्वितीया शुक्र जो आया ।
इन्दु वेद ग्रह शशी सुहाना साल सुहाया ।[5]
दीजे दान मुक्ति का काटो भव की माया ।
माँगूं होय अधीना चरणीं सीस नवाया ॥

सुर नर गावत हारे तुम गुण पार न पाया ।
केवल तुमरे चरण का किंचित सा गुण गाया ।
'चन्दूलाल' आनन्दी बारामास बनाया ।
रहता नगर कोटले निसदिन तुमरा साया ॥

---

१. दिखाई देता है । २. काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार ।
३. गिरनार पर्वत । ४. तक (यहाँ अभिप्राय को) ।
५. भाद्रपद, द्वितीया, शुक्रवार, १९४१ वि० ।

बारामासा मूर्तिपूजन

चेत चरण वदूं[1] आदि ऋषभ[2] के जिन से मत्त[3] प्रकाश[4] होवे ।
रिद्धि सिद्धि सुख होत घनेरा कर्मरूप दुख नास[5] होवे ।
जिन पूजन संग प्रीत लगाई मोक्ष मार्ग तिन पास होवे ।
'चन्दूलाल' कर पूजन प्रभु का जब लगि घट में श्वास होवे ।।

वसाख वसार[6] कुगुरु-संग मन से प्रभु पूजन में सुरत करीं[7] ।
धूप दीप नैवेद्य प्रभु के सन्मुख विधि से लाय धरीं[8] ।
आचारंग[9] को खोल मती[10] कर देख कुगुरु से नाहिं डरीं[11] ।
'चन्दूलाल' प्रभु पूजन करके मोक्ष मार्ग में जाय खरीं[12] ।।

जेठ जुगत देख ज्ञाता सूत्र[13] की मन के भरम मिटावत रे ।
सूत्र अर्थ को मूल न जानें स्वकृत कुगुरु सुनावत रे ।
जैन धर्म को छोड़ कुमति यह भ्रष्ट धर्म चित लावत रे ।
'चन्दूलाल' कर पूजन प्रभु का सतगुरु[14] तुझे समझावत रे ।।

---

१. वन्दना करता हूँ । २. जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर श्रीऋषभ देव जी ।
३. बुद्धि । ४. प्रकाश, प्रकाशित होती है । ५. नाश ।
६. विसार, त्यागना । ७. करना (करो) । ८. धरना (धरो) ।
९. जैन धर्म ग्रंथ । १०. समझ कर ११. डरना (डरो)
१२. खड़े होना (खड़े हो जाओ)
१३. जैन धर्म ग्रंथ, यहाँ आचारंग से ही अभिप्राय है
१४. सत्यगुरु से यहाँ अभिप्राय है जैन धर्माचार्य श्री विजयानन्द सूरि प्रसिद्ध नाम श्री आत्माराम वि० १८९३—वि० १९५३) ।

हाढ़ होश कर देख कुमति यह पंच अंग[1] की वाणी तू।
दशवैकालिक[2] लिखा जो होवे सोई सत्य कर जाणीं[3] तू।
संग कुगुरु का छोड़ दे दिल से पूजन में चित ठाणीं[4] तू।
'चन्दूलाल' प्रभुदास भाषता[5] सुगुरु सीख अब माणीं[6] तू॥

सावन सार धर्म नहीं जानें स्वकृत धर्म चलावन जी।
जिन प्रतिमा की करते निन्दा कुमति नरक विच पावन[7] जी।
अर्थ पूजन जिस सूत्र में आवे सोई कुगुरु छड़ जावन[8] जी।
'चन्दूलाल' बिन दर्श प्रभु के बिरथा जन्म गमावन[9] जी॥

भादों भरम मिटा कर दिल से प्रभु पूजन में ध्यान धरो।
ठाणा अंग[10] सुगडांग[11] उवाई[12] इन लिख्या परमान[13] करो।
राय प्रसेनी लिख्या मानकर संग कुगुरु का हान टरो।
'चन्दूलाल' प्रभु पूजन करके भवसागर आसान तरो॥

अस्सू अष्ट द्रव्य[14] की पूजा क्यों चित से बिसराई रे।
गज अस्वारी त्याग कुमत क्यों खर संग प्रीति लगाई रे।
अमृत रूपी जिनवर पूजा भगवति सूत्र[15] बताई रे।
'चन्दूलाल' कर संग सुगुरु का रीति धर्म चलाई रे॥

कत्तक कुगुरु न भेद बतावें बैठे पाठ छिपा कर जी।
बाँध आनन पर पतिया बैठे रूप तुरंग बनाकर जी।
कूकर खर कपि देख डरत हैं भाजत हैं भय खाकर जी।
'चन्दूलाल' कहे भवसागर में बैठे नाव डुबा कर जी॥

---

१. पंचांगी आगम; आगम, निर्युक्ति, भाष्य, चूर्णि, टीका।
२. जैन धर्म ग्रन्थ, इसे मूल ग्रन्थ भी कहते हैं। ३. जानो।
४. ठानो, धारण करो। ५. कहता है। ६. मानो, स्वीकार करो।
७. नरक में स्थान पाते हैं। ८. छोड़ जाते हैं। ९. गंवाते हैं।
१०. ठाणांग सूत्र, जै. ध. ग्र. (उपांग)।
११. सुयगडाँग सूत्र जै० ध० ग्र० (सूत्र कृतांग)
१२. उवावई, जै० ध० ग्र०(उपांग)। १३. प्रामाणिक मानो, स्वीकार करो।
१४. जैन मूर्ति पूजन की विधि, अष्टद्रव्यी पूजा। १५. जै० ध० ग्र० का नाम।

मग्घर मानो सीख सुगुरु की यदि भवसागर तरना है ।
सूत्र उपासक लिखा जो होवे सोई शीश पर धरना है ।
गणधर[१] वचन धरो हिरदे में हठ बांधी नहिं मरना है ।
'चन्दूलाल' जो सद्गति चाहो लो जिनवर की शरना है ।।

पोह परणाम[२] जिन्हों के ढीले सो पूजन से डरते जी ।
पूर्व जन्म जिन्हों के सुकृत सो नित पूजन करते जी ।
जो पूजन को हिंसा भाषें नरक कोटि युग भरते जी ।
'चन्दूलाल' कीना जिन पूजन सो भवसागर तरते जी ।।

माघ मान मूलावश्यक[३] में पूजा गणधर मानी है ।
पूजा पाप हरे भव-भव के पूजन मोक्ष निशानी है ।
पूजन करे अमर पद पावे यह जिनवर की बानी है ।
'चन्दूलाल' कर पूजन प्रभु का यह झूठी ज़िन्दगानी है ।।

फागुण फेर जन्म नहीं आना दुनिया अजब तमासा[४] है ।
बिखड़ी नरद[५] फेर[६] नहिं आवे यह चौसर का पासा[७] है ।
सुर नर मुनी तपी योगी का अन्त जंगल में वासा है ।
'चन्दूलाल' कर पूजन प्रभु का जब लगि घट में सासा[८] है ।।

लौंद लोक त्रै बीच भुवन चौदह में पूजन मानी है ।
जो शास्तर में देखा भाला तैसे दास बखानी है ।
राम वेद ग्रह शशि साल में सौण दूज रवि जानी[९] है ।
'चन्दूलाल' मालेरकोटले[१०] भाषी अजब कहानी है ।।

---

१. जैन आचार्य, संख्या में ग्यारह हुए हैं । २. परिणाम, अन्त ।
३. आवश्यक, जै०ध० ग्र०, इसे मूल ग्रन्थ भी कहते हैं । ४. तमाशा ।
५. पिटा हुआ मोहरा । ६. फिर, पुनः । ७. पांसा, दांव । ८. श्वास ।
९. श्रावण, द्वितीया, कृष्ण पक्ष, रविवार, १९४३ विक्रमी ।
१०. मालेरकोटला में ।

बारामासा प्रह्लाद

शिव सुत मन में ध्याइए होत बुद्ध परकास।
जिमि दिनकर के तेज से तम का होत विनास ।।
सद्गुरु पूजूं सर्वदा पूरन कीजे आस।
'चन्दूलाल' प्रह्लाद का रचहूँ बारामास ।।

देश मुल्तान बादशाह बुद्धिमान जाके सत्तर दीवान अन्त सैन का न पामदा[1]।
वड़ा बलवान बीच दोनों ही जहान वली तिस के समान कोई नजर न आमदा[2]
रय्यत[3] सतावे जा से काल डर पावे सुर नर भय खावे नाम अपना जपामदा[4]।
जेते रणशूर 'चन्दूलाल' किए दूर जा का नाम मशहूर हिरनाकुश कहामदा[5] ।।

चेतर चार खूंट भय मानें सुर नर मुनि ऋषिराई, भजे लुकाई।
भजन करे जो राम नाम का देवे शीश कटाई, देर न पाई।
लिया जन्म प्रह्लाद भक्त ने हिरनाकुश घर आई, होत बधाई ।
दान अनेक दिए राजा ने 'चन्दूलाल' छवि छाई, खुशी मनाई ।।

---

१. पाता है। २. आता है। ३. प्रजा।
४. जपाता है, जपने का आदेश देता है। ५. कहलाता है।

जन्म हुआ प्रह्लाद का सुर नर मुनीह से[१] ।
फूलन की वर्षा भई हरषीं दिसा दसे[२] ।।
हुआ वर्ष जब पाँच का खेलन चला कुमार ।
'चन्दूलाल' देखत तिसे सुखी भए नर नार ।।

खेल को रचावे संग बालक ले आवे
घुमियारां[३] घर जावे देख विधना के रंग जी ।
घर घुमियार आवा[४] जले बेशुमार लाट
निकसे हजार सभी देख हुए दंग जी ।
तिसी आवे पास बिल्ली बैठी है उदास रोवे
सूखा तन मास[५] हुए देख तिसे तंग जी ।
बोला अवतारी सुन पापिन घुमारी क्यों है
रोवती मंझारी[६] 'चन्दूलाल' कह निसंग जी ।।

वसाख वचन प्रह्लाद भक्त के सुन बोली घुमियारी[७], सुन्दर नारी ।
काल्ह दिनां मैं बच्चे इसके दिए अगन में डारी, बात बिचारी ।
बीच अगन के नहीं जलेंगे सुनो कुमर अवतारी, बात हमारी ।
'चन्दूलाल' साबुत[८] निकलेंगे लीला हरि की न्यारी, मैं बलिहारी ।।

सुनो भक्त इस जगत में राम नाम आधार ।
पैदा करे पालन करे वही करे संहार ।।
ये बच्चे जलते नहीं राम-नाम जो सत्त[९] ।
'चन्दूलाल' घट घट रमे जानो मन में तत्त[१०] ।।

---

१. हँसे, हर्षाए । २. दसों दिशाएँ । ३. कुम्हारों के घर ।
४. आवां, वह गड्ढा जिसमें कुम्हार बर्तन पकाते हैं ।
५. माँस । ६. बिल्ली । ७. कुम्हारिन ।
८. सम्पूर्ण, यहाँ अभिप्राय है जीवित । ९. सत्य । १०. तत्त्व ।

सुनो घुमियारी पाप किया अति भारी
दिए अगन में डारी बच्चे आज तू मंभार[1] के।
राम राम करें मेरे पिता से न डरें
अन आई मौत मरें बैठी जुल्म गुजार के।
आवा उतराईं तदों[2] पास ही बुलाई
लीला राम की दिखाईं तोहे कहूँ मैं पुकार के।
बच्चे मर जान[3] खो दूं साथ ही परान[4]
'चन्दूलाल' सच मान फाँसी गल बीच डार के।

जेठ जदों[5] उतरेगा आवा लाना मुझे बुलाके, महल में जाके[6]।
इतनी कह प्रह्लाद भक्त फिर चला महल में धाके, खुशी मनाके[7]।
तीन दिनों में पक गया आवा देखे घुमारी आके, रंग रचा के[8]।
'चन्दूलाल' फिर चली घुमारी लाई भक्त बुलाके, परम सुख पाके[9]॥

आवा लगी उतारने खड़े पास प्रह्लाद।
बच्चे निकसे बीच से करे राम को याद॥
इन बच्चों को देख कर हुआ भक्त आनन्द।
धन्य 'शशि' उस नाम को जिन राखे फरजंद[10]॥

सुनो घुमयारी धर्म मात तू हमारी
मत्त पाप कीन मारी ज्ञान मुझको बताइया।
साचा राम नाम लिया मन में पछान
छोड़ सकल जहान ध्यान राम से लगाइया।
इतनी सुनाए चला शीश को नवाए
राम नाम गुण गाए पास मातहुँ के आइया।
आया निज धाम किया मात को प्रणाम
'चन्दूलाल' राम नाम मुखों[11] वचन सुनाइया॥

---

१. बिल्ली। २. तब। ३. यदि बच्चे मर जाएँ।
४. प्राण। ५. जब। ६. जाकर, पहुँच कर।
७. मना कर। ८. प्रसन्नतापूर्वक। ९. पा कर।
१०. पुत्र, यहाँ बिल्ली के बच्चों से अभिप्राय। ११. मुख से।

हाढ़ होश सुन उड़े मात के नैन क्रोध भर आवे, वचन सुनावे।
नाम राम का मत ले बेटा पिता तेरा सुन पावे, जान कढ़ावे[१]।
कहे भक्त तुम सुनो मात अब कुछ न मुझे सुहावे, राम मन भावे।
'चन्दूलाल' जिसने हरि सिमरा तिसे काल नहीं खावे, अमर हो जावे॥

सुने वचन प्रह्लाद के माता बहुत डरी।
हिरनाकुश बुलवाय के हित सों अर्ज़ करी॥
कुँवर पढ़न बिठलाय दो मैं कहती हरचंद।
'चन्दूलाल' प्रह्लाद की बुद्धि हो गई मंद॥

सुन के जवाब हिरनाकुश शताब[२]
हाथ फट्टी ते किताब[३] देय पढ़न बिठामदा[४]।
आज्ञा भिजवाये लिया पण्डित बुलाये
दिये अक्षर लिखाये विद्या आसुरी पढ़ामदा[५]।
भक्त विचारे बैठे सबसे किनारे
लिख रामनाम सारे फट्टी जल्दी दिखामदा[६]।
देख फट्टी सारी शुक्र क्रोध उठा भारी
बैंत पंजसत्त[७] मारी 'चन्दूलाल' कह सुनामदा[८]॥

शावण शुक्र भक्त से बोला ओ पापी हत्यारे, होश बिसारे।
राम नाम लिख भर दी फट्टी, मेटे अक्षर सारे, बैठ किनारे।
पिता तुम्हारा बैरी राम का आकर आज निहारे, फाँसी डारे।
'चन्दूलाल' कहे फिर मत लेना नाम राम का प्यारे, वचन हमारे॥

सुनो गुरु महाराज जी मैं समझाऊँ तोह[९]।
राम नाम बिनु जगत में कछु न और से मोह॥
राम नाम जिसने रटा हुआ जगत से पार।
'चन्दूलाल' हरिभजन बिन डूबत नर मंझधार॥

---

१. निकाल दे, जान निकलवा दे, मौत के घाट उतार देगा। २. शीघ्र। ३. पट्टी तथा पुस्तक। ४. बिठा देता है। ५. पढ़ाता है। ६. दिखाता है। ७. पाँच सात। ८. सुनाता है। ९. तुझे।

पण्डितहुँ ज्ञानी सुनो दासहुँ की वानी
राम नाम सत्य जानी सानी[1] तिसका न कोई[2] जी ।
भक्त उधारे[3] दुष्ट पलक में मारे
पीपा अजामल तारे तारी नारी मीराबाई जी ।
गणका उधारी तारी गौतम की नारी
ध्रुव भीलनी उधारी तारा सदना कसाई जी ।
ऐसे रघुराई संग प्रीत मैं लगाई
'चन्दूलाल' शरणाई होत भक्तन सहाई जी ।

भादों भड़क उठा सुन पण्डित नैन क्रोध भर आया, गुस्सा खाया ।
मारी बैंत भक्त के तन पर संगल से बँधवाया, जुल्म कमाया ।
राम नाम तू छोड़ दे दिल से क्यों तू मुझे सताया, काल सिर छाया ।
'चन्दूलाल' अति बनी लचारी[4] हटे न भक्त हटाया, बहुत समझाया ।।

पकड़ भक्त को ले चला हिरनाकुश के द्वार ।
बीच कचहरी जा खड़ा मुख से कहे पुकार ।।
इस लड़के ने जाय के डोब दई टकसाल ।[5]
राम नाम छोड़े नहीं कहे सच 'चन्दूलाल' ।।

सुन पण्डित की वानी हिरनाकुश अभिमानी
गति राम की न जानी उठा क्रोध मन धार के ।
दीन्ही पंज सत्त गारी उठ चपत[6] मुख मारी
कम्प उठी देह सारी और कहे ललकार के ।
सुनो बेटा प्रह्लाद, मति करो प्रतिवाद
करो राम को जो याद मारूँ फाँसी गल डार के ।
छोड़ो राम का ख्याल दूं उतार नहीं खाल
राव कहे 'चन्दूलाल' राखूँ शीश को उतार के ।।

---

१. तुल्य । २. कोई । ३. उद्धार किया । ४. लाचारी, विवशता ।
५. यहाँ अभिप्राय है साख, यश । ६. चपेड़, थप्पड़ ।

असुर एक न मानी भगत ने बहुत तरह समझाया, मार डराया।
सन्मुख होय पिता के बोला नहीं जरा शर्माया, सुखन फर्माया[1]।
सात द्वीप नवखण्ड बीच में राम नाम की माया, वेद ने गाया।
'चन्दूलाल' हरिभजन बिना नर वृथा जगत में आया, काल ने खाया॥

हिरनाकुश सुनके वचन लिए जलाद[2] पुकार।
शूली दे प्रह्लाद को दीज झटपट मार॥
पकड़ भक्त प्रह्लाद को ले जल्लाद चले।
नर नारी रोवत 'शशी'[3] सातों द्वीप हले[4]॥

तब बाहर लजाय दीनी फाँसी गड़वाय
दिया ऊपर बिठाय कुण्डी गले बीच डार के।
हिरनाकुश गँवार उठा क्रोध मन धार
हाथ फड़ी[5] तलवार कहे मुखों ललकार के।
प्रीत राम से लगाई रीत कुल की गँवाई
तोहे सुरत न आई बैठा मौत को बिसार के।
नित राम गुण गावें क्यों न राम को बुलावें
आज शूलि से बचावें 'चन्दूलाल' दया धार के॥

करतक किरपा[6] मुझ पर उनकी कारज सभी सँवारे, आज हमारे।
मुझ में तुझ में फाँसी खड्ड[7] में घट घट राम प्यारे, व्यापत सारे।
असुर निकन्दन नाम राम का भक्तन के रखवारे, पालन हारे।
'चन्दूलाल' भक्तों के कारण होत सदा अवतारे, असुर विहारे॥

करी बेनती[8] भक्त ने जोड़ के दोऊ हाथ।
तीन दफा फाँसी टुटी[9] कृपा करी रघुनाथ॥
इस लीला को देख के हुए असुर सब दंग।
'चन्दूलाल' बोला वचन होकर असुर निसंग॥

---

१. बात कही, वाणी उच्चरित। २. जल्लाद।
३. कवि चन्दूलाल का उपनाम। ४. हिले, कंपित हुए। ५. पकड़ी।
६. कृपा। ७. गड्ढा। ८. विनती का पं० रू०। ९. टूटी।

तुम सुनो जल्लाद लीजो बाँध प्रह्लाद
छोड़ी कुल मरजाद[1] ध्यान राम से लगाय के।
गिरी ऊपर ले जाये हाथ पाँव बँधवाये
देना शिखरों[2] गिराये इसे मारो तड़पाय के।
हिरनाकुश की बानी सुनी उठे अभिमानी
गति राम की न जानी चढ़े गिरी पर जाय के।
किया भक्त को ज़ेर[3] दिया ऊपर से गेर[4]
लाई पलक न देर 'शशि' आखदा[5] सुनाय के॥

मग्घर माया ऐसी राम की चोट लगन नहीं पाई, जान बचाई।
चला भक्त प्रह्लाद महल को रामनाम गुण गाई, खुशी मनाई।
जब देखा हिरनाकुश राजे मुख पर ज़र्दी छाई,[6] दहशत खाई[7]।
'चन्दूलाल' कुछ पेश न जाए सभी लिए बुलवाई, पेश न जाई॥

यह लड़का किस विधि मरे सुनो सभी चित्त लाय।
जो मारे प्रह्लाद को मुंह माँगा धन पाय॥
सुनि बूआ[8] प्रह्लाद की हिरनाकुश बुलवाय।
कहे 'शशि' क्या दुख पड़ा बैठा सभा लगाय।

सुन बात मात जाई तुझे कहूँ समझाई
राखूं फरक न काई[9] कहूँ सत्य सत्य वाक नीं[10]।
सुत बैरी प्रह्लाद करे रामहुँ को याद
मेरा राम साथ वाद जाल[11] किया मुझे खाक नीं।
किये जतन हजार ताकी आमदी न हार
देवे इसको जो मार सोई मेरा अंग साक[12] नीं।
'चन्दूलाल' करतूत मेरी डोवी[13] इस धूत[14]
ऐसा जन्मा कपूत मेरा काट दिया नाक नी।

---

१. मर्यादा। २. चोटी से। ३. नीचे, उलटा। ४. गिरा दिया।
५. कहता है। ६. मुख पीला हो गया।
७. भय खा गया, भयभीत हो गया। ८. फूआ, फूफी।
९. भेद न रखूं, छिपा कर नहीं रखूं।
१०. सम्बोधन, 'अरी' के लिए पंजाबी प्रयोग। ११. जला कर।
१२. सगा सम्बन्धी। १३. मेरी इज्जत डुबा दी। १४. धूर्त्त।

पोह पयारे वीर[1] हमारे सुनो बात चित लाके, क्रोध मिटा के।
बीच अगन के नहीं जलूँगी कहूँ तुझे समझाके, वर गौराँ[2] के।
लेकर आज कुँवर तेरे को बैठूं अगन में जाके, गोद बिठा के।
'चन्दूलाल' जल जाय कुँवर तब निकलूँ खुशी मना के, झटपट धा के॥

हिरनाकुश सुन के वचन दई चिता चिनवाय।
लेकर बैठी गोद में दीनी अगन लगाय॥
चार तरफ़ से जल उठी लगी अगन को पौन[3]।
'चन्दूलाल' जिनके हरी तिन को मारे कौन॥

चिता जले बेशुमार लाट निकले हजार
सभी देखें नर नार मलें हाथन से हाथ जी।
देखो बुआ हत्यारी दया दिल में न धारी
बैठी अगन मँझारी[4] लिए कुँवर को साथ जी।
जल बल हुई खाख[5] रहा कोयला न राख
चली जगत में साख लोग टेकते हैं माथ[6] जी।
ऐसी राम की शकत[7] लगी आँच न भगत
सभी देखता जगत 'शशि' धन्य रघुनाथ जी॥

माघ मान घटया असुरों का निकल कुंवर जब आवे, दर्श दिखावे।
देख कुँवर को हिरनाकुश फिर धातु आठ मंगावे, थम्भ करावे।
थम्भ त्यार हुआ अति भारी बीच धरन गड़वावे, बहुत तपावे।
'चन्दूलाल' जब हुआ अगन सम पकड़ भक्त बुलवावे, वचन सुनावे॥

जो तू चाहे जिन्दगी छोड़ राम का नाम।
नहीं तो लिपटो थम्भ से आन पड़ा अब काम॥
कहाँ तुम्हारा राम है अब उसको बुलावाये।
'चन्दूलाल' इस मौत से लेवे आज बचाये॥

---

१. भाई। २. पार्वती। ३. पवन। ४. मध्य। ५. खाक।
६. मकर संक्रान्ति से पहले वाले दिन पंजाब में लोढ़ी का त्योहार मना कर, रात के समय अग्नि की पूजा होती है। उसी की ओर संकेत है। ७. शक्ति।

देख थम्भ अति भारी बनी भक्त लाचारी
देह काँप उठी सारी औ' धरण गिरा जाय के।
सुध आई प्रह्लाद किया रामहुँ को याद
सुनी राम फरयाद आए रूप को बटाय[1] के।
कीड़ी[2] रूप को बनाय चढ़े खम्भ पर जाय
दिया भरम मिटाय दर्श अपना दिखाय के।
लीला देख रघुराई खुशी भक्त ने मनाई
जप्फी[3] खम्भ साथ पाई 'चन्दूलाल' झट धाय के।

फागुन फरक जरा मत समझो जप्फी खम्भ सों पाई, हरि गुणगाई।
जल समान शीतल हुआ खम्भा हिरनाकुश भय खाई, खड्ग उठाई।
उठी खड्ग तब हाथ पकड़ के गर्ज उठे रघुराई, हुए सहाई।
'चन्दूलाल' नरसिंह रूप धर निकले खंभ से धाई, पकड़ लियो आई॥

हिरनाकुश को पकड़ के दिया धरण पटकाय।
छाती ऊपर चढ़ गये गोद भक्त बिठलाय॥
मानुष हूँ मैं सिंह हूँ दिन दीखे क्या रात।
अन्दर बाहर कित 'शशी' कौन वक्त कहु बात॥

तुम सुनो रघुनाथ कहूँ जोड़कर हाथ
मैं नवाऊँ तोहे माथ धन्य धन्य सियाराम है।
मानुष स्वरूप नाहीं सिंह बन भूप
ऐसे सुन्दर स्वरूप को तो मेरा परनाम[4] है।
अब दिन रात नाहीं बाहर अन्दर भी नाहीं
पड़ा दहलीज़ पाहीं यही मेरा तो कलाम[5] है।
सुन एती 'चन्दूलाल' लीनी आन्दराँ[6] निकाल
बैठे गले बीच डाल दिया स्वर्ग मकाम[7] है॥

---

१. बदल कर। २. चींटी। ३. आलिंगन। ४. प्रणाम।
५. मैं तो यही कह सकता हूँ। ६. आँतड़ियाँ। ७. स्थान।

लौंद लोक तीनों में सुर नर जय जयकार बुलाई, खुशी मनाइ।
दिया राज प्रह्लाद भक्त को वर्षा पुष्प वर्षाई, बजी बधाई।
देकर दर्श भगत अपने को गुप्त हुए रघुराई, कला दिखाई।
'चन्दूलाल' सियाराम भजो नित जन्म मरण कट जाई, फर्क न काई ॥

साल उन्नी सौ तैंताली अस्सू मास उजियाली
तिथ तेरस निराली रविवार शुभ जानिए[1]।
बाँका कोटला शहर बीच चौक के लहर
तहाँ दास की ठहर खुला बहर[2] पछानिए।
भूल चूक होवे जहाँ गुणी सोध लेवें तहाँ
दोऊ हाथ जोड़ कहाँ[3] दास विनती को मानिए।
पढ़े सुने बारामास तो वैकुण्ठ मिले बास
'चन्दूलाल' की दुकान पास पीपल नसानिए[4] ॥

---

१. आश्विन, शुक्ल पक्ष-१३, रविवार, १९४३ वि०।
२. बैठने का स्थान, मंदिर के बाहर का स्थान, बहरिया।
३. कहता हूँ। ४. निशानी है।

बारामासा हरिश्चन्द्र

पारब्रह्म प्रभु को नमूँ नमूँ प्रथम गुरुदेव ।
निष्कामी परमार्थी धन धन[1] जिनकी सेव ॥
धन धन जिनकी सेव मती निर्मल हो तूरण[2]।
गुरु कृपा से काज सभी हो जात सम्पूर्ण ॥
घट घट व्यापक जान नाम जिनका भव मूरण[3] ।
भक्तन के प्रतिपाल करें दुर्जन को चूरण ॥
गुरु हरि हरगुरु वेद मुख गुरु जग तारनहार ।
चरण कमल गुरु नमन कर वर्णूं कथा अपार ॥

शारदा भवानी तीन लोकहुँ में मानी,
माता काँगड़े की रानी[4] ऐसा वेदहुं में जानिए ।
ठाराँ[5] ही पुराण यश करत बखान
ऐसो शंकर ध्यान धरें तेरो वाक वानिए ।
माँगूं वरदान मोहे दीजिये अनाथ जान
उपजे ज्ञान और कण्ठ में वसानिए ।
दास 'चन्दूलाल' पर होवना दयाल
मात सभी ही हवाल हरीचंद[6] का बखानिए ॥

---

१. धन्य धन्य । २. तूर्ण, तुरन्त, शीघ्र । ३. मूर, (मूल), मूलन, नियन्ता ।
४. दुर्गा, काँगड़ा के निकट स्थित ज्वालाजी के मन्दिर में स्थापित दुर्गा-मूर्ति ।
५. अठ्ठारह । ६. हरिश्चन्द्र ।

चेत चित में देख हित से लीला उस करतार की ।
क्षण में सर्व पैदा किये पशु जीव खग नर नार की ।[१]
निशि दिवस जो प्रतिपाल करता है संकल ससार की ।
भज ले अलख तज मान को यह खेल है दिन चार की ॥

पुरी अवध जो रस की भरी तिस में हरीचंद भूप जो ।
चढ़ता करन जब जंग को भरते थे रज से कूप जो ।
घर बीच तारा थी कामिनी सो जान शशिवत रूप जो ।
तिन के सपूतर एक 'शशि' रोतास[२] नाम अनूप जो ॥

दान अनेकों करत हैं हरीचन्द महाराज ।
रत्न सिंहासन बैठ कर करें जगत के काज ॥
करें जगत के काज राज में दुखी न कोई,
जो इच्छा भगवान बात होवे है सोई;
इन्द्रपुरी के बीच इन्द्र ने सभा लगाई,
हरीचंद की बात आन नारद ने गाई;
मृत मण्डल के बीच में सुनो इन्द्र सुर ज्ञान ।
तुमरी पदवी पाएगा किये 'शशी' बहु दान ॥

सुनी इन्द्रहुँ ने बात काँप उठा तभी गात
खान पान न सुहात कहे वचन सुनाय के ।
कोई ऐसा ऋषिराज कीजे काम मेरा आज
मेरी तिसहुँ को लाज वाका सत्त[३] तोड़ो जाय के ।
सुन कौशिक सुजान मुनि शील सतवान
कहे मुख से बखान ऐसे इन्द्र को आय के ।
'शशि' सुनो देवराज सारूँ[४] सब थारे[५] काज
मृत्यु लोक जाऊँ आज रूप शूकर बनाय के ॥

वैसाख वचन सुनाय मुनि शूकर का भेस बनायया ।
मृतलोक में पुरी अवध जो तिसके निकट झट आयया ।
जहाँ बाग था हरिचंद का वहाँ जाय शोर मचायया ।
कितने तरू जड़ से उखाड़े हट्टे न मूल हटायया ॥

---

१. क्या । २. रोहित, रोहिताश्व । ३. सत्य । ४. पूर्ण करूँ । ५. तुम्हारे ।

आड़ू नारंगी संतरे पिस्ता चमेली फूल जो ।
पट पट के[1] सगरे धरन डारे मच गया भर धूल जो ।
माली चले डर के सभी हरीचन्द के अनुकूल जो ।
महाराज तुमरे बाग को छोड़े न शूकर मूल जो ॥

हरीचन्द सुनके वचन हुए बहुत हैरान ।
ऐसा शूकर कौन है जिस किया नाश उद्यान ॥
जिस किया नाश उद्यान सुनो माली समझाऊँ,
जो पे तुम कहो झूठ आन शूली दिखलाऊँ;
सुन राजा के वचन जोड़ कर बोला माली,
किया बाग वीरान फूल फल तोड़ी डाली;
किया बाग बर्बाद जो शूकर बड़ा बुलन्द[2] ।
झूठ कहूं फांसी मुझे सुनो राव हरिचन्द ॥

बात कही जब माली राव सुरत संभाली
झट खड्ग निकाली मुखों हुकम सुनायया ।
सुनो सगरे वज़ीर कुछ करो तदबीर[3]
कैसा शूकर गंभीर धीर बागहुँ में आयया ।
सैन सगरी बुलाओ झट जाय घेरा पाओ
तिसे पकड़ ल्यायो बाग खाक में मिलायया ।
दास 'चन्दूलाल' गावे जाके आगे चल आवे
जान मूल नाँहि पावे राव बिगुल बजायया ॥

जेठ जलद सजाय सेना तरफ आया बाग की ।
घेरा चौतरफे पायया कोऊ गति न जाने भाग की ॥
बोले हरीचन्द जो जिस तरफ की निकले शिकार ।
जावे वही तिसके मगर[4] लावे पकड़ मत कीजे वार ॥
सुनके वचन तब भूप के सब सैन होत कड़ी खड़ी ।
हरिचन्द सम्मुख आय शूकर उड़ चला[5] भर चौकड़ी ॥
तब राव ने घोड़ा जलद शूकर के पीछे लगायया ।
चल चल के 'चन्दूलाल' हरिचन्द घोर बन में आयगा ॥

---

१. उखाड़-उखाड़ कर । २. ऊँचा, भारी (भयंकर) ।
३. योजना, ढंग । ४. पीछे । ५. भाग गया ।

तीर निकाला राव ने शूकर हुआ अलोप ।
नज़र चौतरफे नहिं पड़ा हुआ राव अति कोप ।।
हुआ राव अति कोप लगी प्यासा अतिभारी,
पड़ा नजर जल घाट पास बैठा ब्रह्मचारी;
दो कन्या दो बाल विप्र के पास सुहाएँ,
आय तहाँ हरिचंद विप्र को वचन सुनायें;
मुझे तनिक बतलाइए शूकर बड़ा गम्भीर ।
आया है इस तरफ को 'शशि' नदी के तीर ।।

सुन राव के वचन बोले विश्वामितर मुनि
सुनिए सुजन क्रोध चित्त से मिटाइए ।
जौन सूरमे[1] कहाएँ पीछे लौट के न जाएँ
चार वेद ऐसा गाएँ मत झूठ पतियाइए ।
बैठो पास मेरे आन करो गंग अस्नान
आज पक्ष पहचान चित्त दान से लगाइए ।
'चन्दूलाल' झट आय राव वेदिका सजाय
शादी इनकी कराय यश जगत में पाइए ।।

हाड़ होय अधीन हरिचन्द विप्र को अरज़ी करे ।
करूँ गंग का अस्नान मुनि तुमरे वचन सिर पर धरे ।।
घोड़े को झटपट बाँध के अस्नान कीन्हा जाय के ।
झट न्हाय सम्मुख आय मुनि के बैठा शीस नवाय के ।।
कहो काम सब पूरन करूँ जल्दी मुनी बतलाइए ।
हरीचन्द दानी नाम है खाली मत उठ के जाइए ।।
सुनके वचन हरिचन्द का बोला मुनि मुख से उचार ।
कीजे विवाह इन चार का हो पुण्य तुमरा बेशुमार ।।

देर ज़रा मत कीजिए सुनो विप्र सुर ज्ञान ।
चलो हमारे नगर में मुँह माँगा लो दान ।
मुँह माँगा लो दान ब्याह इनका करवाऊँ,
कोई चीज़ न पास कहो क्या यत्न बनाऊँ;

---

१. शूरवीर ।

सुन राजा के वचन फेर[1] बोला ऋषिराजा,
सभी व्याह की चीज पास मेरे है आजा[2];
'चन्दूलाल' तब तक अमर जब लगि शशि सुमेर।
वक्त पर्व का जात है करो ज़रा मत देर॥

सुनि विप्रहुँ की बानी हरिचन्द अति दानी
कर वेदिका निशानी व्याह तिन का करामदा
शादी तिन की कराए राव अर्ज़ लगाए दान
देऊँ चित लाए मुखों माँगो मन भामदा[3]।
सुन भूपहुँ की बानी बोले बालक छलानी
हमें दीजे राजधानी दानी बड़ा तू कहामदा[4]।
'चन्दूलाल' कोष दीजे राजपाट पुण्य कीजे[5]
यश जगत में लीजे देर काहे को लगामदा[6]।

सावन सुना जब भूप ने जल का कलश कर में लिया।
सब राज धन घरबार का झट दान तिन्हू को कर दिया॥
जब दान सब कुछ दे दिया तब बोल्या[7] विश्वामितर।
अब व्याह की दछना[8] मुझे सौ भार कंचन दो पुतर[9]॥
इतना वचन सुनके हरीचन्द सोच मन अपने करे।
तदबीर हरगिज़ न चले तकदीर जब उल्टी परे॥
लीजे मुनी सौ भार कंचन चल मगर हमरे नगर।
'चन्दूलाल' अन्नजल जब करूँ तुम्हरा करज़[10] निबटाय कर॥

साथ राव के विप्र जो चला नगर दरम्यान।
मारग में रोतास सुत मिला राव से आन।
मिला राव से आन जोड़ कर शीश नवाया,
कहाँ लगाई देर पिता क्यों चित घबराया;

---

१. फिर। २. आज, अभिप्राय इस समय। ३. भाता है।
४. कहलाता है। ५. दान कीजे (दान पुण्य करना : मुहावरा) ६. लगाता है।
७. बोला। ८. दक्षिणा। ९. पुत्र। १०. कर्ज़, उधार(भार)।

कौन तुम्हारे संग हाथ क्यों पकड़ा तुमरा,
कह दो सगरा हाल मिटे सब संशय हमरा;
सुनो पुत्र सब राज का दिया दान इस हाथ।
'शशि' दक्षिणा माँगता इस विधि आया साथ॥

सुनो पुत्र रोतास मत होवना उदास जाय
मातहुँ के पास झट पास मेरे लावहीं।
देना शौरण[1] सौ भार नहीं सत[2] जावे
हार लिखे लेख कर्तार बेटा कोई न मिटावही।
दिन दूसरा पछान नहीं किया जलपान
किया भूख ने हैरान हाल सगरा सुनावही॥
'शशी' सुनके रोतास होय चल्या[3] उदास
लगा बीत्तन[4] जो त्रास पास मातहुँ के आवहीं॥

भादों भड़क मन में लगी मुख से कुमर कहे मात को।
सुन मात बात ख्याल कर विपदा पड़ी अज्ज[5] तात को।
बन में पिता ने जाय के दिया राज सगरा दान कर,
सौ भार शोरण और माँगे सुनिए मात ध्यान धर;
सुनके वचन रोतास के बेआस हो धरणीं[6] गिरी,
आई होस[7] तज अफसोस तब हरिचन्द के चरणीं[8] पड़ी;
सौ भार मुनि को दीजिए मत कीजियो शरमिन्दगी।
'चन्दूलाल' सत मत त्यागिए जब लगि पिया यह जिन्दगी॥

काम किया तुमने भला सुन पिया चतुर सुजान
नारायण के अर्थ तू किया राज सब दान।
किया राज सब दान राम से ध्यान लगाया,
दीजे हमको बेच पिया क्यों चित घबराया;

---

१. स्वर्ण। २. सत्य।
३. चला। ४. त्रास बीतने लगा, भय बढ़ने लगा (बीतना : मुहावरा)।
५. आज। ६. धरती पर। ७. होश। ८. चरणों पर।

नारायण के अर्थ लगे जो देह हमारी,
धन धन अपने भाग[1] धन्य है जननेहारी[2],
बीस भार में लीजिए भूषण मेरा तमाम।
'चन्दूलाल' दो विप्र को करो पिया यह काम॥

सुन राव हरिचन्द हुआ मन में अनन्द
हत्थों लाह[3] गूठीबन्द[4] दिया विप्र के हाथ में।
या में हीरा अनमोल बीस भारहु[5] के तोल
रानी भूषण दो खोल मोती चमकत नाथ[5] में।
रानी सुनते ही सार[6] दिया भूषण उतार
कौन मेटे होनहार जौन लिखि विधि माथ में।
पूरे किए चाली[7] भार साठ रहे जो उधार
'शशि' तीनों बेच डार मुनि चलें तेरे साथ में॥

आया मास देख असौज उड़ गई मौज विधना क्या करी।
दिन रैन अब सुख चैन में बिन खबर विपदा आ परी॥
तज राज सुख परिवार पुर तीनों मुनी संग हो लिए।
विधना की रेख अलेख[8] नहिं मिटती जतन लाखों किए[9]॥
नगरी को तज आए कोस जब बेहोस हो मग में खड़े।
लगी धूप जब रोतास मुख गया सूख पग छाले पड़े॥
रानी विकल सुत देख तब बोली वचन हरिचन्द को।
आगे कठिन मग दूर मंज़िल दुख पड़ा फरज़ंद को।
जल्दी सवारी कीजिए पिया देख गति मुझ लाल की।
कभी कोस पग चाला[10] नहीं 'चन्दूलाल' बिन रथ पालकी॥

त्राण भरे रानी वचन सुन बोले हरिचन्द।
प्यारी तुमसे सौ गुणा मुझ प्यारा फरज़न्द॥
मुझ प्यारा फरज़न्द करूँ किस विधि अस्वारी,
तन मन धन की खबर तुझे है रानी सारी;

---

१. भाग्य। २. जन्मदात्री। ३. हाथ से उतार कर। ४. अंगूठी। ५. नत्थ।
६. सुनते सारही (पंजाबी मुहावरा) सुनने के साथही, सुनते ही तुरन्त।
७. चालीस। ८. अलख, जो दिखाई न दे।
९. लाखों यत्न करने पर भी। १०. चला।

लिखी कर्म की रेख टरे हरगिज़ नहीं टारी,
रानी अब मत डोल धीर धर चलो अगारी[१];
गोद उठाऊँ कुँवर को मत दिल करो उदास ।
सहज सहज 'शशि' चल पड़ो क्यों दिखलावे त्रास ॥

तीनों करके विचार उठ चले हठ धार
कोई नहीं मेटहार[२] लिखे लेख जो ललाट के ।
चले मारग में ज़ात दिन बीत गये सात
जहाँ पड़ती है रात गये निराहार काट के ।
मुनि तोड़ने के सत्त किए लाखों ही निमित्त
तीनों डोला नहीं चित्त वश पड़े न उचाट के ।
मुनि धार बटु[३] वेश किया काशी में प्रवेश
दिन रहा कुछ शेष पास आए राजघाट के ॥

कार्तिक कठिन वे काट निश सब उठे लख रविवार को ।
तीनों की मुश्कें बांध पण्डित ले चला बाजार को ॥
जा चौक में बिठला दिए कहे मुख से मोल सुनाय के ।
ये तीनों बन्दे बेचता जिसे गरज हो ले आय के ॥
रानी को वेश्या देख इक[४] पण्डित से बोली अनन्द से ।
इस नार का लो मोल हमसे छोड़िए अब फन्द से ॥
देओ बीस कंचन भार गणका[५] संग झट ले जाइए ।
नहीं तनिक भर इसका उजर[६] जो दिल चहे[७] करवाइए ॥
सुनके वचन गणका मुनि नख भार कंचन ला धरे ।
'चन्दूलाल' रानी देख मुनि से जोड़ कर विनती करे ॥

नाथ नार की अर्ज़ है सुनो दया चित धार ।
गणका को मत बेचिए धर्म होएगा छार ।
धर्म होएगा छार कर्म खोटे करवावे,
पर पुरुषों संग भोग कराके द्रव्य कमावे;

---

१. अगाड़ी, आगे । २. मिटाने वाला । ३. ब्रह्मचारी ।
४. एक । ५. गणिका, वेश्या। ६. उज्र, आपत्ति । ७. चाहे ।

बिना पुत्र के कभी मुझे कल्ली[1] मत देना ।
मिल जाए कोई सेठ दाम मुँह मांगे लेना;
रानी विनती सूर्य से करी बाँध दोऊ हाथ ।
लज्जा राखो वंश की हे अनाथ के नाथ ॥

सुनी भानु ने पुकार कपि प्रगटे हजार वस्त्र
गणका के फार दिए भंगी जो पुकार के ।
आये सेठ जगन्नाथ नाय पण्डित को माथ बोले
कहो एक साथ मोल दोनों का उचार के ।
सुन सेठहुँ की वानी बोला पण्डित छलानी
चाली भार देवो आनी सुत साथ इस नार के ।
एती सुन साहुकार 'चन्दूलाल' दया धार दिया
हेम चाली भार लेय चला साथ प्यार के ।

मगसिर मगन मन बीच हो संग सेठ के दोनों गए ।
कर सेठ के घर की टहल[2] दिन विपत के काटत भए ॥
इतनी उधर की कह चुका हरिचन्द की अब सुन कथा ।
आया वहाँ इक राज भंगी कलुआ जिसका नाम था ।
बँधी मुश्क नृप की देख कलुआ पूछा वटु से मोल जो ।
सुन विप्र मुख सों बोल नख दिए भार कंचन तोल जो ॥
कलुआ खुशी मन बीच हो हरिचन्द को घर ले गया ।
निज नार से कहने लगा लिया मोल यह बन्दा नया ॥
मैं तो श्वसुर घर जात हूँ मत तंग इसको कीजिए ।
माँगे जो तुमसे आए 'शशि' बिन उजर मंगवा दीजिए ॥

मात मसानी[1] सिमर के गया ससुर के ग्राम ।
झटपट करके चल पड़ा जो करना था काम ।
जो करना था काम दिवस दस में मुड़ आया,
जब देखा हरिचन्द भूख से मुख कुम्हलाया,

---

१. अकेली । २. सेवा । १. मरघट की देवी, चण्डी ।

कहे नार से जाय अरी पापिन कमजाता[1],
नहिं खाने को दिया सूख गया हरिचंद गाता ।
हाथ जोड़ पत्नी कहे सुनो कंत 'शशि' बात ।
बिन माँगे देती नहीं सुत को दूधी मात ।।

बात सुनिये गुसाई पूछो हरिया बुलाई कभी
मंगया[2] न आई कछु कहूँ सच खोल के ।
जान हरिचंद दोश[3] हुआ मन में खमोश
मिटे तन का न रोश[4] चला भंगन से बोल के ।
झट हरिया बुलाई गया हट[5] हलवाई कहे
दीजिए मिठाई हलवाई इसे तोल के ।
कहे दास 'चन्दूलाल' मत कीजिए ख्याल दिन
जितने दो माल दाम मुझसे लो मोल के ।

चढ़या[6] जो पोह पुकार के हरिचंद कहे हलवाई से ।
ऐसी मुलायम चीज दो पच जाय जो नर्माई से ।।
बिन अन्न दिन इकबीस बीते तोल जल्दी दीजिए ।
दिए खाँड सत्तू तोल झट कहे घोल इनको पीजिए ।।
हरिचन्द सत्तू खाँड ले गंगा पे पहुँचा धाय के ।
कर स्नान जब खाने लगा खड़ा विप्र बन मुनि आय के ।।
कहे राव से भूखा मरा बिन अन्न बीते सात दिन ।
हरिचंद सुन सब दे दिया चला खाय ब्राह्मण ताँह[7] छिन ।।
इमि करत बीते सात दिन नित विप्र खा जाये आन के ।
नहिं भाग्य में खाना 'शशी' दिया छोड़ नृप यह जान के ।

नीर अन्न सब त्याग नृप लिया सबर मन धार ।
इक दिन कलुआ राव से बोला देख विचार ।
बोला देख विचार विपत मत इतनी सहिए,
एक घड़ा जल लाय बैठ चित मरघट रहिए,

---

१. कमजात, नीच । २. मांगा । ३. दोष ।
४. रोष । ५. हाट, दूकान । ६. चढ़ा । ७. उसी क्षण ।

मुर्दा वहां जो आये टके ले लेना पाँचे,[1]
बिना दाम के कभी लगन पावे न आँचे;[2]
इतनी सुनकर ले घड़ा पहुँचा गंगा तीर ।
उधर चली रानी 'शशी' भरन विप्र का नीर ॥

रानी आन गंगा तट लगी भरने जो घट राव
देख के प्रगट बोले रानी सों सुनामदा ।[3]
दिन ठाई[4] बीते जान नहीं अन्न जलपान किया
भूख ने हैरान घड़ा चुक्कया न जामदा ।[5]
रानी कीजिए सहाय घड़ा दीजिए चुकाय[6]
रानी बोली घबराय पिया सत्त क्यों डिगामदा ।[7]
भरूँ विप्र जल धीर तुम भरो नीच नीर करो
माफ़ तकसीर[8] मेरा हाथ न समामदा ।[9]
घड़ा गंग में लिजाये कंधे जल जब आये
राखो कंधे पे उठाये पिया काहे घबरामदा ।[10]
कवि कहे 'चंदूलाल' सुन इतनी भूपाल घड़ा
भर तत्काल घर कलुए के जामदा ।[11]

आया माघ मरघट बीच में हरिचंद जा डेरा किया ।
अब सुन इधर रोतास की जो कष्ट भावी ने दिया ॥
ले विप्र की आज्ञा कुमर गया फूल लेने बाग को ।
मुनि सुमन तरु में जा छिपा तन धार काले नाग को ॥
जब पूछ मालिन से कुमर ने फूल तोड़ा जाय के ।
मारा डंक नाग अंगुष्ठ पे गिरा धरन पे गश खाय के ॥
गति देख यह मालिन कुमर जा भाग रानी से कही ।
डस लीन्हा सुत तव नाग ने यहाँ बैठ क्या सुख से रही ॥
मालिन वचन रानी सुनत खा मूर्च्छा धरणी पड़ी ।
खुली मूर्च्छा आ बाग में 'शशि' देख सुत रोवे खड़ी ॥

---

१. पाँच । २. आंच न लगने पाए, जलाया न जाए ।
३. सुनाता है । ४. अठ्ठाईस । ५. उठाया नहीं जाता । ६. उठवा दीजिए ।
७. सत्य क्यों गिराता है, सत्य से क्यों डोलते हो ।
८. भूल (यहाँ अभिप्राय धृष्टता) ।
९. हाथ नहीं समाता है, वश की बात नहीं है ।
१०. घबराता है । ११. जाता है ।

हाय हाय विधि क्या करी त्राहि त्राहि रघुनाथ।
इक तो सुत प्यारा मरा दूजे पिया नहिं साथ।
दूजे पिया नहिं साथ पड़ी विपदा अति भारी,
हे बेटा मुख बोल नहीं खा मरूँ कटारी;
ऐसा किया विलाप काँप गए पृथ्वी शेषा,
आखिर पुत्र उठाय किया मरघट परवेशा[1];
आधी चादर फाड़ कर दिया कफन ओढ़ाय।
'चन्दूलाल' चिन के चिता दीन्हा बीच बिठाय ॥

लाँबू देन लागी रानी राव बोला बानी
पीछे अगन लगानी कर हमरा चुकाय के।
रानी होई सुन दंग बोली होय के निसंग
तेरी नार अरधंग मत भूल परनाय के।
आज मरा है रोतास होया भानु वंश
नास कौड़ी एक नहीं पास देऊँ कहाँ से ल्याय के[2]।
सुन इतनी भूपाल कर बोला आँखें लाल
पहले पांच टके डाल फेर फूँक इसे जाय के।
रानी होय के लाचार दीनी चादर उतार
लांबू लाय के कुमार बैठी बीच सती आय के।
'चन्दूलाल' निज जान दया कीनी भगवान ऐसा
पड़ा मेघ आन चला अगन बुझाय के।

फागुन फरेबी विप्र फिर बन भेड़िया नगरी गया।
नृप महल से जा राव सुत झटपट उठा कर चल दिया॥
लड़के की गरदन तोड़ कर रानी के आगे धर चला।
जब नृप भवन रौला[3] पड़ा बन ज्योतिषी वहाँ जा रला[4]॥
कहे राव से हूँ ज्योतिषी सब हाल तुम सुत का कहूँ।
जब लगि पता लगता नहीं इहाँ बैठ मैं तब लगि रहूँ॥
मरघट में डायन ले गई दिया मार पर खाया नही।
बैठी हुई है नग्न तन मुख खून जर्दी छा रही ॥

१. प्रवेश २. लाकर। ३. शोर।
४. वहाँ जाकर लोगों में सम्मिलित हो गया।

सुन संतरी झटपट गए लाए खोज डायन पकड़ के।
कर दी खड़ी नृप सामने कर खूब दोनों जकड़ के ।।
कहे संतरी सुन भूपति इस डैन[1] तुम सुत मारया।
सुन संतरी की बात नृप अति क्रोध मन में धारया ।।
कलुए को भूप बुलाय के सब हाल डायन का कहा ।
जहां मारया मम कुमर इस तहाँ आपका ठेका रहा ।।
वहाँ शीश इसका काटिए जहाँ लाश मम सुत की पड़ी ।
सुनि ले चला कलुआ 'शशि' मरघट में ला कीनी खड़ी ।।

हरिचंद बुलवाय के कलुआ कहे पुकार।
काटो शीश इस डैन का अभी मार तलवार।
अभी मार तलवार पुत्र राजा का खाया,
सुनि बानी हरिचंद क्रोध भर खड्ग उठाया;
काटन लागे शीश विष्णु सिंहासन डोल्यो,
झट आए भगवान हाथ फड़[2] नृप का बोल्यो;
सत तुमरा पूरन भया मैं तुम पर आनन्द ।
मत मारो निज नार को सुनो राव हरिचन्द ।।

सुन विष्णु हुँ की बानी बोला हरिचंद दानी
फिरे कौन तू छलानी मत पास मेरे आइए।
यह डैन बदकार दिया राव सुत मार कहा
कलुए पुकार शीश इसका उड़ाइए।
दास कलुआ कहाऊँ कैसे हुक्म मिटाऊँ
शीश इसका उड़ाऊँ मत मोहे समझाइए।
जो हों आप भगवान तो दिखाइए निशान
इन्हें देके जीवनदान दोऊ बालक उठाइए।
सुन इतनी गोपाल दिए दर्शन विशाल
जिन्दा किए दोउ बाल हरी कहें बर पाइए।
तेरी नार सती तारा नहीं राव सुत मारा
कियो इन्द्र सब कारा 'शशि' अवध को जाइए ।।

---

१. डायन का पं० रू० । २. पकड़ ।

आया मास लौंद लपट[1] चरण कर जोड़ नृप अर्जी करे ।
प्रभु तन चतुर्भुज देख सुत रानी चरण दोऊ जा परे ॥
तीनों की भगती देख के हरि वर दिए मन भावने ।
करें पुष्प वर्षा गगन सुर लगे नृप हरी गुण गावने ॥
कर जोड़ नृप हरि से कहे मुझ संग कलुआ तारिये ।
सुत नार विनती मान पुनि संग सेठ विप्र उबारिये ॥
सुन वचन नृप बोले हरी तुम संग सब तर जाएँगे ।
संसार सुख बहु भोग तुम वैकुण्ठ मम पद पाएँगे ॥

इमि देय वर हरिचन्द को प्रभु होय अन्तर्धान जी ।
युग-युग में धर अवतार निज भक्तों का राखा मान जी ॥
सुत नार को ले संग नृप पुरी अवध में झट आयया ।
लगा राज नृप सुख से करन सुन सब प्रजा सुख पायया ॥
बहु वर्ष लगि परिवार संग नृप राज सुख भोगत भए ।
नृप भक्त हरिचंद अन्त को पुरी संग ले सुरपुर गए ॥
यह भक्त हरिचन्द की कथा कही निज मती अनुसार कर ।
'शशि' सुने गावें प्रेम से पावें पदारथ चार नर ॥

शुभ साल विक्रम एक नव पुनि पांच पर धर चार को ।
वदि माघ निस पूरन कियो तिथ तीज शुभ शशि वार को[2] ॥
गर[3] हो कहीं पर भूल मेरी माफ बुधजन कीजिए ।
नृप सत्यवादी का कथन सुनकर सजन सुख लीजिए ॥
रहूँ कोटला मालेर हरि के चरण में नित ख्याल है ।
कहते 'शशि' उपनाम मेरा नाम चन्दूलाल है ।
द्विज जाति कौशल गौत्र मम आयु वर्ष पैंतीस की ।
शशि मास शुभ द्वादश भए किरपा भई जगदीश की ॥

---

१. लिपट कर । २. माघ, कृष्ण पक्ष ३, सोमवार १९५४ वि० ।
(पंचाग के अनुसार इस वर्ष माघ महीने में दो दूजें आती हैं । दूसरी दूज केवल १ घड़ी २४ पल की है । क्योंकि यह रचना रात्रि के समय समाप्त की गई थी (निस पूरन कियो) इसलिग तिथि तीज हुई है ।
३. यदि ।

बारामासा हितोपदेश

चेत चित्त अपने बैसाख तू विचार कर
जेठ जग जान दिन चार का तमासा[1] है।
हाढ़ हीन दीन और सावन स्याने लाख
भादों भले बुरे अस्सू अन्त को विनासा है।

कत्तक कुरूपी रूपी मग्घर महान वली
पोह पुन्नी[2] पापियों का जंगल में बासा है।
माघ मान छोड़ 'चन्दू' फागुन फरक नहीं
लौंद लोग ऐसे जैसे पानी में बतासा है।

---

१. तमाशा। २. पुण्यवान।

बारामासा श्रीकृष्ण

चेत चन्द्र चढ़े भादों निशा में रोहिणी[1] सहित बुधवारी ते[2] आठें कारी।[3]
मथुरा पुरी में वासुदेव गृह हुए कृष्ण अवतारी ते अति बलधारी।
श्याम वर्ण तनु चार भुजा शिर मोर मुकट छवि न्यारी ते लागे प्यारी।
कैद पड़े वसुदेव देवकी अस्तुति करते भारी ते होश संभारी।।

वैसाख बाल जब हुए कृष्ण तब वासुदेव हर्षाया ते बहु सुख पाया।
उसी काल सब टूटी बेड़ियां पहरू[4] नींद भरमाया होश नहीं आया।
वासुदेव ने कृष्ण चंद को ले छजले[5] में पाया कंस भय खाया।
'चंदूलाल' वसुदेव कृष्ण को ले गोकुल को धाया नहीं अटकाया।।

जेठ जदों[6] जमुना पर आया चलती बेशुमारी ते हुई लाचारी।
देख पिता को दुखी कृष्ण ने नीचे लात पसारी ते बात बिचारी।
छोह[7] चरण श्री कृष्णचंद्र का उतरी यमुना सारी ते इकवारी।
'चंदूलाल' कहे उसी चरण को वन्दन सदा हमारी ते बारम्बारी।।

---

१. रोहिणी नक्षत्र। २. और। ३. कृष्णपक्ष की अष्टमी।
४. प्रहरी, पहरेदार। ५. टोकरी में। ६. जब। ७. छू-कर।

हाढ़ हाजिर हुआ बीच गोकुल के नन्द महर घर जावे देर नहिं लावे।
मात यशोदा पड़ी खाट पर कृष्ण गोद में पावे ते कन्या लावे।
ले कन्या मथुरा में आया पहरू ध्यान लगावे ते गर्ज सुनावे।
उसी तरह से पड़ गई बेड़ियाँ 'चंदूलाल' सच गावे भानु चढ़ आवे।।

शावन शोर पड़ा मथुरा में पहरू कंस घर आया ते जिक्र सुनाया।
वासुदेव घर जन्मी कन्या सुनत कंस उठ धाया पलक नहीं लाया।
जा लड़की जब देखी कंस ने धोबी जल्द बुलाया ते कह समझाया।
'चंदूलाल' पटड़े[1] से पटको यही कंस फरमाया तरस नहीं आया।।

भादों भरम न किया धोबी ने पटड़े पर दे मारी ते मार पछारी।
गर्ज गर्ज कर चढ़ी गगन को रूप अष्टभुज धारी लसक[2] रही भारी
मुझे मारे से कुछ नहीं होगा सुनो कंस द्रोहकारी गई मति मारी।
'चंदूलाल' गोकुल नगरी में भए कृष्ण अवतारी काल तेरे जारी।।

अस्सू ऐसी बात सुनाकर जल्द गगन को धाई ते जोत समाई।
कंस राज को हुई सोच तो पूतना जल्द बुलाई ते कह समझाई।
कंसराज की आज्ञा पाकर उठ गोकुल को धाई काल रहा छाई।
'चंदूलाल' स्तन लाय जहर फिर सुन्दर छवि बनाई नन्द घर आई।।

कत्तक गोद उठाय कृष्ण को लागी दूध पिलावन दगा कमावन।
सने जहर[3] दुध खींच लिया हरि प्राण काढ़[4] ले जावन कला दिखावन।
जै जैकार करें सुर मुनि नर वर्षा पुष्प वर्षावन खुशी मनावन।
'चंदूलाल' हरि बीच गोकुल के लागे रंग रचावन जो मन भावन।।

---

१. पाट, तख्ता। २. चमक।
३. विष सहित। ४. निकाल कर।

मग्घर मुरली मुख पर धरके राग रागनी गावें ते तान सुनावें।
आशा सिंधु बड़हंस भैरवी सारंग सकल सुहावें तलंक बजावें[1]।
पीलू जंगला गौरी पूर्वी स्वर धनाक्षरी गावे ते एमन भावे[2]।
'चन्दूलाल' नट देश कान्हड़ा श्री विहाग बधावे ते परक रचावे[3]।

पोह प्राण मोह लिए गोपियाँ आईं घरों से धा कर रंग बना कर।
जा जमुना पर रास रचाई काली नाथ लियो,[4] आकर नृत्य दिखाकर।
तृणावंत वत्सासुर मारयो वक अघ चोंच दवाकर चक्र फिराकर।
जमना तट पर लए जुगातां[5] 'चन्दूलाल' कहे जाकर मुरली बजाकर।।

माघ मौत सिर आयी कंस के झट अक्रूर बुलाया ते कह समझाया।
कृष्णचन्द्र बलराम को लाओ यह मुख से फर्माया क्रोध भर आया।
ले रथ को अक्रूर बावरा गोकुल को उठ धाया दर्श हरि पाया।
'चन्दूलाल' बलराम कृष्ण को मथुरा में ले आया अति सुख पाया।।

फागुन फाग रचाई साँवरे देखे मथुरा सारी खिली फुलवारी।
मल्ल युद्ध जहाँ रचा कंस ने पहुँचे तहाँ मुरारी ते नटवर धारी।
मुष्ट चण्ड[6] दोऊ मल्ल पछाड़े कुवलपीड़[7] गज भारी ते दंत उखारी।
'चन्दूलाल' फिर कंस पछाड्यो खुशी भए नर नारी ते पृथ्वी सारी।।

लौंद लोक तीनों गुण गावें वर्षा पुष्प बरसाई ते खुशी मनाई।
सभी देव मिल अस्तुति कीनी तन मन धन चित लाई छबी सुहाई।
किए सुखेल अनेक हरी ने कुछ बर्णी न जाई ते धन[8] यदुराइ।
'चन्दूलाल' मालेर कोटला जिन तेरी लीला गाई ते होईं सहाई।।

---

१. राग रागनियों के नाम। २. राग रागनियों के नाम।
३. राग रागनियों के नाम। ४. नाथ लिया।
५. महसूल, कर।
६. चाणूर तथा मुष्टिक नामक राक्षस।
७. कुवलयापीड़, हाथी का रूप धारण करने वाला वह राक्षस जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था। ८. धन्य।

बारामासा ज्ञानोपदेश

चेतर चिन्ता हुई जो मुझको देख जगत का हाल जिया[1]।
काल बली तो यूँ उठ घेरे ज्यों मछली को जाल जिया।
दया धर्म तू मूल न कीजे न चल उलटी चाल जिया।
'चन्दूलाल' भज राम नाम को यही जाए तेरे नाल[2] जिया॥

वैसाख विसारा नाम हरी का बहुत बुरा यह कीता[3] है।
सुन्दर नाम ग्रमोलक हरि का भूल कभी न लीता[4] है।
निशि दिन पाप करें ग्रभिमानी छोड़ी धर्म की रीता[5] है।
'चन्दूलाल' भज राम नाम को यही भागवद् गीता है॥

जेठ जिन्द[6] जिस बख्शी तुमको उसकी कर पहचान जिया।
जिस पर ग्रपनी कृपा करे वह ग्रौर करे ग्रहसान जिया।
चार दिनों के जीवन कारण मत कर इतना मान जिया।
'चन्दूलाल' भज राम नाम को यही धर्म यही दान जिया।

---

१. रे मन। २. साथ। ३. किया।
४. लिया। ५. रीति। ६. जीवन।

हाढ़ हिरस[१] सब छोड़ दे बन्दे यह जग झूठ पसारा है।
सच्चा नाम अमोलक हरि का सब कुछ और नकारा है।
भाई बंधु तेरा कुटुम्ब कबीला सब मतलब का यारा है।
'चन्दूलाल' भज राम नाम को काल बली सिर भारा है।।

सावन समझो दिल में अपने यह जीवन दिन चार जिया।
यह संसार समुद्र अति भारी चले कहर की धार जिया।
बीच राम के नाम की बेड़ी होय पकड़ कर पार जिया।
'चन्दूलाल' भज राम नाम को कहता बारम्बार जिया।।

भादों भजन करो तुम हरि का यह तुमरी बड़याई है।
धन यौवन औ' महल माड़ियाँ सब बादल की छाई है।
यह संसार सभी मतलब का मात पिता क्या भाई है।
'चन्दूलाल' भज राम नाम को झूठी लोग लुगाई है।।

असू आखिर चलना सबको क्या चंगा[२] क्या मंदा[३] है।
जती सती तपसी जाएँगे क्या सूरज क्या चंदा है।
अन्त समय का कोई न साथी छोड़ जगत जो धंदा[४] है।
'चन्दूलाल' भज राम नाम को कटे जगत का फंदा है।।

कत्तक कर्म लिखा सोई मिलता इस मन को नहीं धीर जिया।
एक के ऊपर छत्र फिरे और एक फिरे हैं फकीर जिया।
एक पहनते अतुलित मखमल एक पास नहीं लीर[५] जिया।
'चन्दूलाल' भज राम नाम को जो मोड़े तकदीर जिया।।

---

१. लोभ। २. भला।
३. बुरा। ४. धंधा। ५. कपड़े का टुकड़ा।

मग्घर माल बिगाना देख के दिल नाहीं तरसाइए जी ।
क्यों तू सोच करे मन मूरख कर्म लिखा सोइ पाइए जी ।
एस[1] जगत को स्थिर नहीं रहना झूठे बाँधते दाइए[2] जी ।
'चन्दूलाल' भज राम नाम को भवसागर तर जाइए जी ॥

पोह परीत[3] करो उस हरि से अन्त न जिसके रंग दा[4] जी ।
रामचन्द्र सा और न दाता देकर मूल न मंगदा जी[5] ।
मरना तुझको याद नहीं है पाप करन से न संगदा[6] जी ।
'चन्दूलाल' भज राम नाम को वक्त जाए है लंगदा[7] जी ॥

माघ मान क्यों करता मूरख अकल तेरी क्यों मारी है ।
इक मन होके राम न जपया उम्र बीत गई सारी है ।
मीराबाई ने जपा शाम को सो पल छिन में तारी है ।
'चन्दूलाल' भज राम नाम को क्यों जित बाज़ी[8] हारी है ॥

फागुन फेर[9] जन्म नहीं आना भजन हरी का करिए जी ।
जे[10] कोई खोटी कह भी जाए वह भी सिर पर धरिए जी ।
कलयुग नहीं यह कर युग कहिए निश करिए दिन भरिए जी ।
'चन्दूलाल' भज राम नाम को भवसागर से तरिए जी ॥

लौट लोभ तू मूल न छोड़ें खोटे रस्ते जाएगा ।
धर्मराज जब लेखा माँगे क्या उत्तर दे पाएगा ।
उस वेले[11] का कोई न साथी अपनी करनी पाएगा ।
'चन्दूलाल' भज राम नाम को नहीं पाछे पछताएगा ॥

---

१. इस । २. दाइए बाँधना, इरादे करना । (मुहावरा — मंसूबे बाँधना ।)
३. प्रीत । ४. का । ५. नहीं माँगता ।
६. लजाता नहीं, शर्माता नहीं । ७. लाँघता है, निकलता जा रहा है ।
८. जीती हुई बाज़ी । ९. फिर, पुनः, दोबारा ।
१०. यदि । ११. समय ।

संदर्भ-ग्रन्थ-सूची

१. उपाध्याय, कृष्णदेव (डॉ०) : लोकसाहित्य की भूमिका : साहित्यभवन इलाहाबाद : १९५७।

२. चातक, गोविंद (डॉ)० : गढ़वाली लोकगीत-एक सांस्कृतिक अध्ययन : राधाकृष्ण प्र०, दिल्ली : १९६८।

३. जैन, हीरालाल (डॉ०) : भारतीय संस्कृति में जैन-धर्म का योगदान : मध्यप्रदेश शासन साहित्य परिषद् भोपाल : १९६२।

४. तुलसीदास : श्रीरामचरित मानस : गीता प्रेस, गोरखपुर : : सं० २०२८।

५ नामवर सिंह, (डॉ०) : हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग : साहित्य भवन, इलाहाबाद : १९५४।

६. नाहटा, अगरचन्द : प्राचीन काव्यों की रूप परम्परा : भारतीय विद्या मंदिर शोध प्रतिष्ठान; बीकानेर : १९६२।

७. पाण्डेय, इन्दु प्रकाश : अवधी लोकगीत और परम्परा : राम नारायण लाल, प्रयाग : १९५८।

८. बाबुलकर, मोहनलाल : गढ़वाली लोकसाहित्य का विवेचनात्मक अध्ययन : ज्ञानमंडल, वाराणसी : द्वि० सं०।

९. यादव, शंकरलाल (डॉ०) : हरियाना प्रदेश का लोक साहित्य : हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद : १९६०।

१०. रामपुरिया, श्रीचन्द : अर्हत् अरिष्टनेमि और वासुदेव कृष्ण : श्री जैन श्वेताम्बर तेरा पंथी महासभा, कलकत्ता : १९६०।

११. राकेश, राम इकबाल सिंह : मैथिली लोकगीत : हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग : सं० १९९९।

१२. सहगल, प्रसिन्नी (डॉ०) : गुरु गोबिन्दसिंह और उनका काव्य : हिन्दी साहित्य सम्मेलन, लखनऊ : १९६५ ।
१३. अध्यात्म रामायण : गीता प्रेस, गोरखपुर : सं० २०१५ ।
१४. आरण्यक पुराण : संस्कृति संस्थान, बरेली : १९६७ ।
१५. देवी भागवत पुराण : " " : १९६८ ।
१६. मार्कण्डेय पुराण : " " : १९६७ ।
१७. विष्णु पुराण : " " १९६७ ।
१८. हरिवंश पुराण : " " १९६८ ।
१९. हिन्दी साहित्य कोश : भाग-१ : ज्ञानमंडल, वाराणसी : द्वि० सं० ।
२०. श्रीभागवत सुधा सागर : गीता प्रेस, गोरखपुर : सं० २०१५ ।
२१. श्रीमद् बाल्मीकीय रामायण : " " : सं० २०२४ ।
२२. श्रीमद् भागवत महापुराण : " " : सं० २०२१ ।

संकेत सूची

१. जैन धर्म ग्रन्थ : जै० ध० ग्र० ।
२. द्वितीय संस्करण : द्वि० सं० ।
३. पंजाबी रूप : पं० रू० ।
४. प्रकाशन : प्र० ।
५. बारामासा : बा० ।
६. विक्रमी : वि० ।
७. संवत् । : सं० ।